ISSN (p) : 2394-3912
ISSN (e) : 2395-9369

त्रैमासिक 12(2) अप्रैल-जून, 2025

Technical articles are peer reviewed

www.kahaar.in

कहार

जनविज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

त्रैमासिक, 12(2) अप्रैल-जून, 2025

KAHAAR

A Multilingual People Science Magazine

प्रकाशक

प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसाइटी, लखनऊ
(www.phssfoundation.org)

सह-प्रकाशक

पृथ्वीपुर अभ्युदय समिति, लखनऊ (www.prithvipur.org)

धारणीय कृषि एवं पर्यावरण केंद्र को मिली नई रफ्तार : किसानों की त्रैमासिक बैठक में उत्साहजनक सहभागिता

18 मई, दिन रविवार को उत्तर प्रदेश के बाराबंकी जिले के देवा ब्लॉक में स्थित अकटहिया गाँव में प्रो. एच.एस. श्रीवास्तव फाउंडेशन की तरफ से चल रहे 'धारणीय कृषि एवं पर्यावरण केंद्र' के अंतर्गत त्रैमासिक किसान बैठक का आयोजन किया गया। बैठक का उद्देश्य बहुस्तरीय मचान खेती, पोषण वाटिका, फल बागान, स्थानीय नेतृत्व निर्माण तथा गाँव के "ज्ञान विज्ञान ग्रामीण पुस्तकालय" के सामाजिक महत्व पर किसानों एवं युवाओं से संवाद स्थापित करना था।

Technical articles are peer reviewed

कहार

जनविज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

त्रैमासिक, 12(2) अप्रैल–जून, 2025

A Multilingual People Science Magazine

प्रधान संपादक
प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह, लखनऊ

कार्यकारी सम्पादक
श्री कृष्णानन्द सिंह, लखनऊ

सह–सम्पादक
प्रोफेसर शिल्पी वर्मा, लखनऊ
डॉ. रूद्र प्रताप सिंह, आजमगढ़
डॉ. धीरेन्द्र पाण्डेय, लखनऊ
श्री शुभम अभिषेक, धनवाद
श्री मेराज उद्दीन सिद्दीकी, लखनऊ
डॉ. अर्चना सिंह, ब्रैनफोर्ड (यू.एस.ए.)
श्री सुनीत कुमार यादव, मऊ
श्री आशीष सिंह, लखनऊ

सम्पादक मण्डल
प्रोफेसर राकेश सिंह सेंगर, मेरठ
डॉ. पीयूष गोयल, नई दिल्ली
डॉ. सुमन कुमार सिन्हा, गोरखपुर
डॉ. सुधाकर तिवारी, कुशीनगर
डॉ. अनुज कुमार सक्सेना, सीतापुर
श्री आकाश वर्मा, लखनऊ

सलाहकार मण्डल
प्रोफेसर सरोज कान्त बारिक, लखनऊ
प्रोफेसर प्रफुल्ल वी. साने, जलगाँव
डॉ. राम सनेही द्विवेदी, लखनऊ
डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय, बालापार, गोरखपुर
डॉ. सी. एम. नौटियाल, लखनऊ
प्रोफेसर शशि भूषण अग्रवाल, वाराणसी
डॉ. एस. सी. शर्मा, लखनऊ
डॉ. रूद्रदेव त्रिपाठी, लखनऊ
प्रोफेसर रणवीर दहिया, रोहतक
प्रोफेसर एन. रघुराम, दिल्ली
डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, नई दिल्ली
डॉ. सिराज वजीह, गोरखपुर
प्रोफेसर मालविका श्रीवास्तव, गोरखपुर
डॉ. निहारिका शंकर, नोएडा
डॉ. संजय सिंह, झांसी
श्री उपेन्द्र प्रताप राव, दुदही
इं. तरूण सेंगर, कारमेल, (यू.एस.ए.)
डॉ. पूनम सेंगर, चण्डीगढ़
श्री अविनाश जैसवाल, दुदही

आवरण फोटो
श्री प्रकाशवीर सिंह, लखनऊ
प्रबंध–संपादक
श्री अंचल जैन, लखनऊ
सोशल मीडिया
श्री रणजीत शर्मा, लखनऊ
श्री योगेन्द्र प्रताप सिंह, लखनऊ
टाइप सेटिंग और प्रोडक्शन
श्री जावेद अहमद, लखनऊ

घोषणा

लेखक के विचार से कहार टीम का सहमत होना जरूरी नहीं हैं। किसी रचना में उल्लेखित तथ्यात्मक भूल के लिए 'कहार' की टीम जिम्मेदार नहीं होगी।

लेखकों के लिए

वैचारिक रचनाओं में आवश्यक संदर्भ भी दें एवम् इन संदर्भों का विस्तार रचना के अंत में प्रस्तुत करें। अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी तथा हिन्दी सहित अन्य भाषाओं की रचनाओं का अंग्रेजी या हिन्दी में सारांश दें। मौलिक रचनाओं के के साथ रचना के स्वलिखित, मौलिक एवम् अप्रकाशित होने का प्रमाण पत्र दें। लेखक पासपोर्ट साइज फोटो भी भेजें। रचनाएँ English के Times New Roman (12 Point) और हिन्दी में मंगल/यूनिकोड में कन्वर्ट कर के भेजें। तस्वीर अलग से और फिगर नंबर के साथ भेजे।

विज्ञापन के लिए संपर्क करें :–

Rs. 6000/- Full Page (B/W) **Rs. 4000/- Half Page (B/W)**
Rs. 10000/- Full Page (Color) **Rs. 6000/- Half Page (Color)**
Rs. 15000/- Full Page (Color) Back Cover

सदस्यता / Subscription

रुपये 250/– प्रति कॉपी रुपये 1000/– वार्षिक
(पोस्टल चार्ज सहित)
Rs 250/ per copy and Rs 1000/ per annum (Including postal charges)
भुगतान हेतु चालान के लिए निम्न ईमेल पर सम्पर्क करें :
For Invoice of Payments Please contact on the following
Email : phssoffice@gmail.com

कार्यालय : 04, पहली मंज़िल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ, उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025, भारत
ईमेलः kahaarmagazine@gmail.com/
dr.ranapratap.59@gmail.com
वेबसाइटः www.kahaar.in/www.kahaar.org (web portal)

अनुक्रमणिका (Content)

क्र.सं. / Sl. No.	विषय / Topics	लेखक / Author	पृष्ठ / Page
1.	मानव स्वास्थ्य एवं पोषण सुरक्षा में कदन्नों (मिलेट्स) का योगदान	*सुजाता सेठी एवं शिव मंगल प्रसाद*	1
2.	क्लाइमेट चेंज	*रणवीर सिंह दहिया*	2
3.	आंवला : प्रतिरक्षा कल्याण के लिए एक प्राकृतिक शक्ति वर्धक कैप्सूल	*मधु प्रकाश श्रीवास्तव*	3
4.	मृदा स्वास्थ्य कार्डः किसानों के लिए योजना	*शिवम सिंह, वी. पी. सिंह, महेंद्र प्रताप सिंह, ऋचा रघुवंशी, चंद्रकांत चौबे और शक्ति ओम पाठक*	6
5.	पृथ्वी पर शिव के प्रतिनिधि हैं.. पेड़–पौधे	*अज्ञात*	8
6.	जल संरक्षण में भारतीय ज्ञान परम्परा	*मंजुल त्रिवेदी, अरविन्द कुमार सिंह एवं आदित्य आभा सिंह*	9
7.	सृजनात् निर्माणपर्यन्तम् (संस्कृत काव्य)	*गणेश शंकर बाजपेयी*	11
8.	योग और योग दिवस	*गिरीश पाण्डेय, IRS*	12
9.	भोजपुरी के भवभूति पं0 धरीक्षण मिश्र (भोजपुरी आलेख)	*सुधाकर तिवारी*	15
10.	सफलता की कहानी किसान की जुबानी	*पार्थ प्रतीक एवं रुद्र प्रताप सिंह*	19
11.	म्हारी सेहत (हरियाणवी गीत)	*रणवीर सिंह दहिया*	20
12.	भोजपुरी भित्ति–चित्रकला क सौन्दर्य आ नया–नया जतन (भोजपुरी आलेख)	*वंदना श्रीवास्तव*	21
13.	भोजपुरी लोग (भोजपुरी कविता)	*राणा प्रताप सिंह*	24
14.	Sustainable Solutions for Global Land Degradation: Natural Farming Perspectives	*Riha Kumari, Shubham Abhishek and Bhanu Pandey*	25
15.	Reduce, Reuse and Recycle: Organic Waste	*Pankaj Srivastava, Shikha Munjal, Preetam Singh Gour and Nitin P. Singh*	35
16.	Mitigating Global Warming Through Earth Science: Geological Strategies	*Bodhisatwa Hazra, Chinmay Sethi and Prasenjeet Chakraborty*	39
17.	The Hidden Dangers of Rapidly Ripened Bananas in India	*Kartik Kota*	43
18.	Soil Pollution from Mining Activities: Impact on Living Organisms	*Bodhisatwa Hazra, Prasenjeet Chakraborty and Chinmay Sethi*	45
19.	Operational Research: During World War- II	*Dr. Praphull Chhabra*	50
20.	Navigating Legal and Ethical Challenges in Organ Transplantation	*Sarthak Chandra, Pradeep Kumar, Abhijit Prasad Misra and Sunil Babu Gosipatala*	51
21.	Traditional Knowledge for Crop Cultivation in India: Need for Mainstreaming the Concept	*Dr Dharmendra Dugaya*	58

सम्पादकीय

जीवन में मिट्टी और मिट्टी में जीवन

जब हम खड़े होते हैं, तो हमारे पांव मिट्टी पर ही टिकते हैं। अगर हमारे पाँवों तले मिट्टी नहीं होती तो हम खड़े भी नहीं हो पाते। हालाँकि हम जब कहते हैं, कि यह मिट्टी के मोल है, तो ऐसा आभास होता है, कि मिट्टी का तो जैसे कोई मोल ही नहीं है। लेकिन ऐसा नहीं है। मिट्टी अनमोल है। मिट्टी ना हो तो पेड़–पौधों की जड़े कहाँ फैलेगी। हमारे पाँव ही नहीं, बल्कि सारे पशुओं, कीड़े–मकोड़ें, वनस्पतियों, फसलों और वृक्ष–लताओं के पाँव भी जमीन से ही ताकत पाते हैं।

पृथ्वी पर मिट्टी इस ग्रह के चट्टानों के टूटने से धीरे–धीरे करोड़ों वर्षों में बनी है। चट्टान पृथ्वी की कसमसाहट से भी टूटते हैं। हवा, पानी, और तेज धूप के झकोरों से भी, और मिट्टी में रहने वाले असंख्य सूक्ष्म जीवों तथा कीड़े–मकोड़ों की अपनी जैविक क्रियाओं से भी। चट्टान टूटकर कंकड़–पत्थर और कंकड़ पत्थर घिसते–घिसते अलग–अलग आकार कणों–कणों वाली मिट्टी की तहें बनाते रहते हैं। सबसे बारीक मिट्टी की तह ऊपर होती है, और नीचे मोटी मिट्टी, फिर छोटे–बड़े कंकड़–पत्थर और फिर पृथ्वी की सबसे भीतरी तह में चट्टानें होती हैं।

मिट्टी से हमारा और पेड़–पौधे और सूक्ष्म जीवाणुओं का अर्थात सभी का पोषण होता है। ये हरे पेड़–पौधे मिट्टी में उपस्थित घुलनशील अकार्बनिक खनिज तत्वों जैसे नाइट्रोजन,सल्फर, मैग्निशियम कॅल्शियम, पोटैशियम,मैगजीन, बोरान और बहुत से ऐसे ही खनिज तत्वों की अधिक या कम मात्रा को अपने छिद्रों में छिपे पानी में घुलनशील अवस्था में छिपाए रहते हैं, जिसे पौधों की जड़े अवशोषित करती हैं। पेड़–पौधों के हरे पत्ते सूरज से ऊर्जा, पृथ्वी से पानी, और हवा से कार्बन डाइऑक्साइड लेकर ग्लूकोज नाम का कार्बनिक पदार्थ बना लेते हैं। ग्लूकोज एक शर्करा है, और शर्करा के कई प्रकारों में बदलते हुए वह अमीनो अम्ल, प्रोटीन, वसा, विटामिन, रंग दवाएं और अनेकों तरह के अपने लिए उपयोगी पदार्थ निर्मित करते रहते हैं, जो उनके भी काम आते हैं, हमारे भी काम आते और पृथ्वी का सभी जीव जंतुओं का जीवन उसी से चलता है। पृथ्वी तंत्र की इंजीनियरिंग इतनी अनूठी है, कि कार्बन डाइऑक्साइड को सोख कर ग्लूकोज बनाने की प्रक्रिया में यही पेड़–पौधे पानी को तोड़कर पर प्राण वायु ऑक्सीजन को हवा में मुक्त कर देते हैं, और सभी प्राणी इसी ऑक्सीजन को सांसों में भरकर अपना जीवन चलाते हैं। सब अपने भोज्य पदार्थों को इसी पानी तथा प्राण वायु से तोड़कर ऊर्जा प्राप्त करते है और अपने जीवन का संचालन करते हैं।

हम पेड़–पौधों और वनस्पतियों को बेरहमी से नष्ट करते हुए भूल जाते हैं, कि हमारा जीवन संचालन उन्हीं के ऊपर टिका हुआ है। अगर वे नहीं होंगे, तो हम भी नहीं होंगे इस पृथ्वी पर।

मिट्टी में बसने वाले करोड़ों–करोड़ सूक्ष्म जीव भी मिट्टी की तरह ही अनमोल होते हैं। वे पेड़–पौधों के लिए खनिज पदार्थ हवा से या मिट्टी से उपलब्ध कराते हैं, और अपने लिए भोजन तलाशते हुए, सभी अजीवित सड़ी–गली कार्बनिक चीजों को तोड़कर उन्हें अकार्बनिक खनिजों में बदलते रहते हैं। इसी कार्बनिक और अकार्बनिक के चक्र में पृथ्वी–तंत्र और उसकी जीवंतता तथा कार्य प्रणाली बँधी है। और इसी पृथ्वी–तंत्र से हम सब का जीवन बंधा हैं। जो सूक्ष्मजीव अजीवित कार्बनिक वस्तुओं को तोड़कर अपना भोजन नहीं ले पाते, वे जीवित वनस्पतियों, प्राणियों और मनुष्यों में प्रवेश कर उनकी जीवित कोशिकाओं से अपना भोजन लेते है, और उन्हे रोग ग्रस्त कर देते।

मिट्टी, पानी, हवा, सूक्ष्मजीव, आकाश, ताप, ठंढ, हरियाली और धूप सब कुछ एक दूसरे से जुड़ा हुआ है ,और यही सब हमारे जीवन का वाहक है।

हमने अपनी सुख–सुविधाओं के लालच में कारखाने में वस्तुएं बनाते हुए जहरीली गैसों और जहरीले कचरे से मिट्टी, पानी, हवा, वनस्पतियों, पशुओं और अपने स्वयं के शरीर को इतना विषाक्त कर दिया है, कि अब बढ़ते अस्पताल, डॉक्टर,दवाएं और मशीन भी बेबस दिखने लगे हैं। इस पर विचार करने की जरूरत है। कोई कहीं अकेले नहीं रह सकेगा। मिट्टी, पानी, हवा, भोजन और पृथ्वी के सभी साधनों पर सबका समान अधिकार है। न सिर्फ मनुष्यों का, पशुओं का भी, पक्षियों का भी, वनस्पतियों का भी, कीड़ों–मकोड़ों का भी और सूक्ष्म जीवों का भी। प्राकृतिक संसाधनों का बंटवारा सिर्फ परिवारों प्रदेशों और देश में नहीं होना,न सिर्फ पूरी मानवता तक में होना है, वास्तव में यह समूचे पृथ्वी–तंत्र में होना है।

जब जागे, तभी बिहान। हम नहीं जागे, तो हम भी विशालकाय डायनासोर और विशाल छिपकलियों की तरह समाप्त हो जाएंगे। पृथ्वी हमारी माता है, और मिट्टी उसकी थाती। माता अपने सभी संतानों का ख्याल रखती है। जो उदंडता की सीमा पार कर जाए, उसे घर से निकालने में हिचकिचाती नहीं माताएं। हमें पृथ्वी के घर में रहना है, तो पृथ्वी–तंत्र के साथ अनुकूलन करना ही होगा। आज यह याद रखना जरूरी है।

राणा प्रताप

(राणा प्रताप सिंह)

Editorial

Soil in life and life in soil

When we stand, our feet rest on the soil. If there was no soil, we would not be able to stand. When we say that this is the value of soil, it seems as, if soil has no value. But it is not so, soil is priceless. If there was no soil, the roots of trees and plants would not spread anywhere. Not only us, but the feet of all animals, insects, plants, crops and trees and creepers also get strength from the soil.

The soil on the earth is formed slowly over millions of years by the breaking of the rocks of this planet. Rocks also break due to the movement of the earth. Rocks also break due to the wind, water, and strong sunlight and also due to the biological activities of the innumerable micro-organisms and insects living in the soil, which break the rocks into pebbles and stones, and pebbles and stones keep on rubbing and forming layers of soil with hard particles of different shapes. The thinnest layer of soil is on top, and below that is the thick soil, then small and big pebbles and stones and then rocks in the innermost layer of the earth.

Trees, shrubs, herbs and microbes are nourished in the soil. These green trees and other plants are provided with the soluble inorganic mineral elements present in the soil such as nitrogen, sulphur, magnesium, calcium, potassium, manganese, boron and many such mineral elements to plants and microbes. These minerals are hidden in the tiny pores of soil in a water-soluble form, which the roots of the plants absorb and convert into an organic substance called glucose by taking energy from the sun, water from the earth and carbon dioxide from the air. Glucose is a sugar, and while converting into many types of sugar, green trees and plants keep on producing amino acids, proteins, fats, vitamins, colours, medicines and many other useful substances which are useful to them as well as to us and the life of all living creatures on earth is sustained by it. The engineering of the earth system is so unique that in the process of absorbing carbon dioxide and making glucose, these trees and plants break down water and release oxygen in the air, and all living beings live their lives by breathing this oxygen, and obtain energy by breaking down food items from this water and oxygen.

While destroying trees and plants ruthlessly, we forget that our survival depends on them. If they were not there, we would also not be able to live on earth.

The millions of micro-organisms living in the soil are also as precious as the soil. They make minerals available to the trees and plants from the air or soil, and while searching for food for themselves, they break down all the non-living, rotten organic things and convert them into inorganic minerals. The earth system and its liveliness are tied up in this cycle of organic and inorganic. And the lives of all of us are tied up. Soil, water, air, microbes, sky heat, cold, greenery and sunlight, everything is connected to each other, and all these are the carriers of our life.

While making things in factories in greed for our own comforts, we have poisoned the soil, water, air, vegetation, animals, and our own bodies so much. The poisonous gases and toxic wastes, that now are increasing with increasing hospitals, doctors, medicines. But also increase in our health management system and machines also seem helpless. There is a need to think about it. No one will be able to live alone anywhere. Everyone has equal rights on soil, water, air, food and all the resources of the earth. Not only humans, but also animals, birds, plants, insects, and microbes have right to use earth's resource as its child. The distribution of resources should not be only among families, states, and countries, not only among the entire humanity, in fact it must be available for the proper earth's system.

When we wake up, morning will come. If we do not wake up, we will also be finished like giant dinosaurs and giant lizards. Earth is our mother, and soil is her skin. Mothers take care of all their children. Mothers do not hesitate to throw out of the house, those who cross the limit of destroying. If we want to live in the house of the Earth, then we must adapt to the earth system. It is important to remember today.

Rana Pratap

(Rana Pratap Singh)

स्वास्थ्य एवं पोषण

समकक्ष समीक्षित

मानव स्वास्थ्य एवं पोषण सुरक्षा में कदन्नों (मिलेट्स) का योगदान

सुजाता सेठी[1] एवं शिव मंगल प्रसाद[2]*

कदन्नों का महत्त्व उनमें उपलब्ध पोषक तत्वों एवं कुपोषण की समस्या के हल के लिए सम्पूर्ण आहार के रूप में तो है ही साथ ही साथ इन्हें जलवायु परिवर्तन के दौर में उपयुक्त फसल भी कहा जा सकता है। वैसे हरित क्रांति के पूर्व मानव के भोजन एवं पोषण का यह एकमात्र स्रोत था। पौष्टिकता के अतिरिक्त इसके सूखा सहन करने की क्षमता, कीटों तथा बीमारियों के प्रति प्रतिरोधक गुण, कम जल उपयोग से पर्याप्त उपज देने की विशिष्टता, कम अवधि की परिपक्वता इत्यादि खूबियों के कारण हमारे देश ने वर्ष 2018 को 'राष्ट्रीय कदन्न वर्ष' के रूप में मनाया। हमारे देश के प्रस्ताव के अनुरूप संयुक्त राष्ट्र (यूनाइटेड नेशनस) ने वर्ष 2023 को 'अंतर्राष्ट्रीय कदन्न वर्ष' घोषित किया है। भारत सरकार ने कदन्नों की उत्पादन को बढावा देने के लिए इनके न्यूनतम समर्थन मूल्य को बढ़ा दिया है, लोकसभा एवं राज्यसभा के कैन्टीन में भी मिलेट से बने व्यंजन बहुत ही चाव से खाये जा रहे हैं।

कदन्नों (मिलेटस) की खेती का महत्व

कम अवधि, कम पूँजी और कम देख–रेख में तैयार होना, विभिन्न जलवायु परिस्थितियों और वर्षापात वाले जगहों पर भी आसानी से उगाये जाने के कारण यह जलवायु परिवर्तन का भी सामना करने के लिए अनुकूल है।

अनाज के दानों, तैयार होने की अवधि और पौधों के गुणों के आधार पर मिलेट्स दो प्रकार के होते हैं–

- मेजर मिलेट (इंडियन मिलेट– ज्वार,पर्ल मिलेट– बाजरा, फिंगर मिलेट/रागी –मडुआ, प्रोसो मिलेट–चीना एवं फॉक्सटेल मिलेट–कंगनी)।
- माइनर मिलेट (कोदो मिलेट– कोदो,लिटिल मिलेट– कुटकी, ब्राउन टॉप मिलेट– छोटी कंगनी, बार्न यार्ड मिलेट–साँवाँ इत्यादि)।

भारत के अनेक राज्यों जैसे राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटका, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश एवं तेलंगाना में मिलेट की खेती की जाती है। ये राज्य मिलकर मिलेट उत्पादन का लगभग शत–प्रतिशत योगदान देते है।

मिलेट के पोषक मूल्य

मिलेट के दानों में तो अनेक प्रकार के आवश्यक पोषक तत्व, विटामिन, रेसे, वसा भरपूर मात्रा में पाए ही जाते हैं जो कि मानव शरीर के लिए अनेक प्रकार से फायदेमंद है साथ ही उनके पुआल (स्ट्रा) में भी बहुत ज्यादा पौष्टिकता होती है जो मवेशिओं के लिए लाभप्रद है।

पोषण से सम्बंधित अन्य जानकारियां

- मिलेट में 60–70% कार्बोहाइड्रेट, 6–12.5% प्रोटीन, 1.5–5.0% वसा एवं 2–7% रेशे के साथ–साथ अनेक विटामिन और खनिज भी प्रचुर मात्रा में होते हैं।
- ये विटामिन बी, मैग्नीशियम, मैंगनीज, फास्फोरस, लोहा और एंटीओक्सिडेंट का भी उत्कृष्ट श्रोत हैं।
- अन्य कुछ एमिनो एसिड को छोडकर सल्फरयुक्त एमिनो एसिड मेथिओनिन एवं सिस्टीन बहुत ज्यादा पाए जाते हैं।
- मिलेट की चोकर (छिलके) में भी नियासिन, फोलसिन, राईबोफ्लेविन एवं थाईमिन पाए जाते हैं जो उर्जा संशलेष्ण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं.
- मिलेट में ग्लूटेन नहीं पाए जाते हैं।

तालिका 1. मिलेट के पोषक मूल्य (प्रति 100 ग्राम खाद्य पदार्थ) – गोपालन इट.आल, 2004

पोषक तत्व/अनाज	बाजरा	ज्वार	मडुआ	कंगनी	चीना	साँवाँ	कोदो
उर्जा (किलो कलोरी)	361	349	328	331	341	397	309
प्रोटीन (ग्राम)	11.6	10.4	7.3	12.3	12.5	6.2	8.3
वसा (ग्राम)	5.0	1.9	1.3	4.3	4.7	2.2	1.4
कैल्सियम (मि.ग्राम)	42.0	25.0	344.0	31.0	17.0	20.0	27.0
लोहा (मि.ग्राम)	8.0	4.1	3.9	2.8	9.3	5.0	0.5
जिंक (मि.ग्राम)	3.1	1.6	2.3	2.4	3.7	3.0	0.7
थायमिन (मि.ग्राम)	0.33	0.37	0.42	0.59	0.21	0.33	0.33
रैबोफ्लाविन (मि.ग्राम)	0.25	0.13	0.19	0.11	0.01	0.10	0.09
फोलिकएसिड (मि.ग्राम)	45.5	20.0	18.3	15.0	9.0	–	23.1
रेशा (ग्राम)	1.2	1.6	3.6	8.0	7.6	9.8	9.0

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, कटक
[2]प्रमुख वैज्ञानिक (एग्रोनॉमी), केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराउं भूमि चावल अनुसन्धान केन्द्र (ICAR-CRRI), पोस्ट बॉक्स सं0 48, हजारीबाग–825301, झारखण्ड (भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक, ओडिशा)
मेल smp_crri@yahooco.in

मिलेट के चिकित्सीय गुण

मिलेट में मौजूद चिकित्सीय गुणों का उपयोग कई प्रकार की बीमारियाँ जैसे–कैंसर, मधुमेह, हृदय रोगों के प्रबंधन में किया जाता है, बच्चों के शरीर के वृद्धि और विकास से सम्बंधित सिलिएक रोगों में भी इसका उपयोग किया जाता है। मधुमेह के प्रबंधन में रेशा युक्त भोजन लाभप्रद होता है जो कि मिलेट में अच्छी मात्रा में पाया जाता है। कुछ एंटीओक्सिडेंट फिनोल भी मधुमेह विरोधी प्रभाव डालते हैं।

डीजेनेरेटिभ बिमारियों में मिलेट का उपयोग

- उम्र के बढ़ने से अनेक प्रकारके डीजेनेरेटिभ (क्षयकारक) बिमारियों जैसे नसों, रीढ़ की हड्डी इत्यादि में विकार, पैरों में सूनापन, झंझनाहट को भी कुछ हद तक रोकता है।
- रक्तचाप का कम होना, हृदय रोगों ट्युमर के मामलों में भी मिलेट का सेवन लाभकारी पाया गया है।
- मिलेट एक क्षारीय भोजन है जो कि मानव शरीर में एक स्वस्थ पी एच संतुलन बनाये रखने में मदद करती है और यही गुण अच्छे स्वास्थ्य के लिए तथा बिमारियों को रोकने के लिए महत्वपूर्ण है।
- मिलेट मैग्नीशियम का अच्छा श्रोत है जो कि माईग्रेन और दिल के दौरे के प्रभावों को कम करने में सक्षम है।
- मिलेट फाइटो–केमिकल (फाइटिक एसिड)से भरपूर होता है जो कोलेस्ट्रोल कम करता है।

कदन्नों को हमारे पूर्वज अनाज के रूप में खाते थे और हट्टे–कट्टे, मजबूत और स्वस्थ रहते थे अभी भी विश्व के अनेक भागों में यह भोजन का मुख्य हिस्सा है। इनके द्वारा तैयार भात और रोटी देखने में उतने अच्छे नहीं होते अतः अभी के समय में आमजनों का भोजन चावल और रोटी हो गया है। लोगों के इन्हें पकाने की कम जानकारी, इनके द्वारा पहुचाये जाने वाले लाभों की कम जानकारी जैसी कुछ समस्याओं के कारण ये उपेक्षित फसल है। इन समस्याओं को विभिन्न प्रसंस्करण तकनीकों को अपनाकर जैसे परिशोधन, भिंगोना, अंकुरण, किण्वन, मिलिंग, माल्टिंग, भूनकर इनके गुणों को बढाया जा सकता है। अभी मल्टीग्रेन आटा का बहुत उच्च वर्ग के लोगों के बीच प्रचलन बढ़ा है, इन आटों में मिलेट का हिस्सा बहुत अहम् हो गया है। मिलेट से अनेक उत्पाद जैसे बिस्किट, माल्ट, चिला, केक, सूप, ढोकला, इडली, नान–खटाई, लड्डू, निमकी, हलवा, पौष्टिक रोटी और न जाने क्या–क्या बनाये जा रहे हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थानों सहित विभिन्न राज्यों के कृषि विश्वविद्यालयों में भी इस पौष्टिक मिलेट की गुणवत्ता और कैसे बढ़ाई जाये, पर कार्य किये जा रहे हैं। सरकार तो प्रोत्साहन दे ही रही है क्योंकि सभी जानते हैं कि मिलेट के द्वारा कुपोषण की समस्या से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है।

हरियाणवी रागिनी

क्लाइमेट चेंज

रणवीर सिंह दहिया

इस क्लाइमेट चेंज नै ग्लोबल वार्मिंग बढ़ाई रै।।
पूरी दुनिया मैं देवै जलवायु प्रदूषण दिखाई रै।।

❖

वातावरण पै घणा कसूता इसनै असर दिखाया
जल यो पूरी दुनिया का प्रदूषित हुया बताया
जमीन तले के पाणी मैं कीटनाशक दवा पाई रै।।
पूरी दुनिया मैं देवै जलवायु प्रदूषण दिखाई रै।।

❖

कीटनाशक शरीर मैं घणे नुकसान करै कहते
कैंसर का प्रकोप घणा हम इसके करकै सहते
विकास यो टिक्या मुनाफे पै म्हारे नाश की राही रै।।
पूरी दुनिया मैं देवै जलवायु प्रदूषण दिखाई रै।।

❖

खेती आली धरती पै जलवायु संकट छाग्या भाई
इसकी उपज की ताकत पूरे तरियां खाग्या भाई
लागत बढ़ी पैदावार की कीमत थोड़ी थयाई रै।।
पूरी दुनिया मैं देवै जलवायु प्रदूषण दिखाई रै।।

❖

विकसित देश कार्बन नाइट्रोजन घणी छोड़ रहे
क्लाइमेट चेंज के फैंसले कसूती ढालां तोड़ रहे
रणबीर इब जनता नै पड़ै कमर कसनी भाई रै।।
पूरी दुनिया मैं देवै जलवायु प्रदूषण दिखाई रै।।

❖

पी–27, इन्द्रप्रस्थ कालोनी, सोनीपत रोड, रोहतक–124001
ईमेल : dahiyars@rediffmail.com

स्वास्थय

समकक्ष समीक्षित

आंवला : प्रतिरक्षा कल्याण के लिए एक प्राकृतिक शक्ति वर्धक कैप्सूल

मधु प्रकाश श्रीवास्तव

आंवला या भारतीय चेरी यूफोरबिएसी कुल का पौधा है। इसका वैज्ञानिक नाम एम्बालिका आफसीनेलिस है। भारतीय बाजार का यह एक मुख्य लाभदायक फल है। भारत के विभिन्न क्षेत्र में इसे अलग–अलग नाम से जाना जाता है जैसे हिन्दी में आंवला, संस्कृत में आंवलिका या धातरी बंगाली में, उड़ीसा में आवंताकि, मलयालम में नैली, तमिल में आवलकामू, पाचवी में अवोलफल कहा जाता है। पौराणिक काव्य जैसे रामायण, कदम्बरी, चरक संघमित्र आदि में इसे इसकी औषधि गुण के कारण अमृत फल कहा गया है। आंवला का वृक्ष कठोर होने के कारण सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है। प्रति हेक्टेर में 15–20 टन तक इसका उत्पादन किया जा सकता है। इसके द्वारा कई उत्पाद तथा आयुर्वेदिक दवाईयां बनाई जाती है। इसलिए इसको 21वीं शताब्दी का सबसे महत्वपूर्ण फल घोषित किया गया है। हिन्दू मत के अनुसार कहा गया है कि रोज एक आंवला खाने से शरीर के सारे रोग मिट जाते हैं।

क्षेत्र तथा वितरण

आंवला का पेड़ भारत, ईरान, ईराक, पाकिस्तान, चीन, मलापा तथा प्रनाम आदि देश में मिलता है। भारत में यह मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश के रायबरेली, जौनपुर, ईटावा, प्रतापगढ़, कानपुर, आगरा, मथुरा में मिलता है। 15,000 हेक्टेयर की भूमि में लगभग 1.50 लाख टन तक इसका उत्पादन होता है।

भूमि तथा जलवायु

ऊसर, परती, बंजर, व सामान्य सभी प्रकार की भूमि में इसे आसानी से उगाया जा सकता है। किन्तु जमीन का जल स्तर 2 मीटर से नीचे होना चाहिए। आंवला का पौधा 0.46 ^{o}C का तापमान सहने की क्षमता रखता है। पुष्प कालिका के समय इसको हल्का गर्म तापक्रम चाहिए होता है। फल के विकास के लिए इसको अधिक आर्द्रता की जरूरत होती है।

किस्में

भारत में तीन किस्में मुख्य रूप से पायी जाती हैं, और दूसरी किस्में इन्हीं से रूपान्तरित की गई है। मुख्य रूप से चकैया बनारसी तथा फांसिस है, जो रूपान्तरित की गई है। उसमें कंचन, नरेंन्द्र–4, नरेन्द्र–10, आनन्द–1, आनन्द–2, आनन्द–3, नरेंन्द–6 तथा नरेन्द्र–7 आदि है।

विभिन्न अवयव

इसके मुख्य अवयव निम्न हैं:–

अवयव	मिलीग्राम/100 ग्राम गूदा
(1) प्रोटीन	0.5
(2) आर्द्रता	81.2
(3) वसा	0.1
(4) फाइबर	3.4
(5) कार्बोहाइट्रेड	14.0
(6) कैल्शियम	0.05
(7) फास्फोरस	0.02
(8) लौह	1.20
(9) विटामिन C	500–1500 (मिग्रा०/100ग्रा0)
(10) विटामिन D	30/100 ग्रा0 गुदा
(11) निकोरिनिक अम्ल	0.2मि0ग्राम/100 ग्राम गुदा

आंवले की खेती

आंवले का मुख्य रूप से सिध्म कलिकायन या रूपान्तरित बलप कलिकायन बहुतायत से होता है। 6 माह से लेकर 15 माह तक के बीज पौधे पर जुलाई से सितम्बर तक कलिकायन करते हैं। जब आंवले की खेती करनी हो तो इसे वर्गाकार क्रम में करते हैं। इनके पौधौ के बीच दूरी 7–9 मी0 होनी चाहिए। पौध रोपड़ से 1.5–2 माह पूर्व गड्ढ़ों की खुदाई करने से सबसे पहले गड्ढ़ों में 20 किग्रा० गोबर सड़ा हुआ तथा 1 किग्रा० नीम की खली को डालते हैं। भूमि ऊसर होने पर 6–8 किग्रा० जिप्सम , 20 किग्रा बालू तथा 1 किग्रा० नीम की खली मिलाकर गड्ढे की भराई करते है। बेकार पड़ी जमीन पर पौध रोपड़ की इनसीटू तकनीकी एक बेहतर उपाय है। उस तकनीकी में वीजू पौधो का रोपड़ उपयुक्त स्थान पर गड्ढे में कर देते हैं। इस तकनीकी से रोपड़ करने पर पौधे आसानी से प्रतिकूल परिस्थित में भी पनप जाते है। कलिकायन के लिए मातृ पौधे से लिया गया सांकर एक हफ्ते तक सुरक्षित किया जा सकता है।

कटाई व छटाई

जब पौधे 0.75 मी० से 1 मी० तक बड़ा हो जाये तो इसके मुख्य तने को ऊपर से 1/2 मी० पे काट देना चाहिए जिससे नई टहनियां उसके आसपास से निकल आयें । नई टहनियां निकलने के पश्चात् फिर इसको काटना चाहिए। इस प्रकार इस पेड़ की नियमित छटाई से पेड़ की टहनियां अधिक तथा घना हो जाता है। जो टहनी कमजोर हो, रोग से ग्रस्त हो उनको सबसे पहले हटा देना चाहिए।

पानी की आवश्यकता

वैसे देखा गया है कि आंवले में

वनस्पति विज्ञान विभाग, महर्षि यूनिवर्सिटी ऑफ़ इनफार्मेशन टेक्नोलॉजी, लखनऊ, भारत'
email : madhusrivastava2010@gmail.com

ज्यादातर पानी की आवश्यकता नही होती है पर गर्मी के दिनों में 10–15 दिन के अन्तराल पर पानी डाल देना चाहिए। जो भूमि क्षारीय या लवणीय हो उस पर अधिक मात्रा में पानी डालना चाहिए।

मल्चिंग

मल्चिंग करने से नमी अधिक समय तक बनी रहती है, वाष्पीकरण कम हो पाता है। जैविक खाद्य का निर्माण अपने आप होता है। कभी–कभी विपरीत तापक्रम जब होता है तो इसका असर कम पड़ता है। मल्चिंग के लिए पेड़ के आस–पास 1 मी0 के अन्दर 10 इंच पुआल, गन्ने की सूखी पत्तियां, भूसा या आम की सुखी पत्तियां डाल देना चाहिए। अगर ये सब नहीं मिलता है तो काली या रंगीन पालीथीन डाल देनी चाहिए।

उर्वरक तथा खाद्य

अलग–अलग भूमि के लिए जो पौधे की उम्र व उत्पादकता पर निर्भर करती है। पहले दस साल तक 100 ग्राम नत्रजन, 50 ग्राम फास्फोरस तथा 100 ग्राम पोटाश को या 1 किलोग्राम नत्रजन, 500 ग्राम फास्फोरस व 1 किलोग्राम पोटाश तक देनी चाहिए। इस उर्वरक के साथ गोबर की सड़ी खाद्य व बाजार मे मौजूद जैव नियन्त्रण उत्पाद को डालने से फसल अधिक स्वस्थ व अधिक उत्पादक हो जाती है। अगर भूमि ऊसर है तो 100–500 ग्राम जिंक सल्फेट के साथ 50–100 ग्राम बोरेक्स देना चाहिए।

तोड़ाई व भंण्डारण

आंवले के पेड़ में 6–7 वर्ष के बाद फल आने शुरू हो जाते हैं। और 60–70 वर्ष तक देते है। एक पूर्ण विकसित आंवले के पेड़ से 1 कुन्तल आंवला तथा एक हैक्टेयर से लगभग 180–200 कुन्तल तक आंवला प्राप्त किया जाता है। तोड़े गये फल को सामान तापक्रम पर 1 हफ्ते तक या 10 ^{o}C पर एक महीने तक रखा जा सकता है। इसके अलावां इसको नमक के घोल के साथ मिलाकर 2 अंश सेमी० मोड़ने तक आराम से रखा जा सकता हैं।

बीमारी तथा उनका उपचार

आंवला पूरे भारत में पाया जाता है। इसमे कुछ बीमारी भी हो जाती है, जो आंवला के उत्पादन के लिए काफी हानिकारक है। राजस्थान में पाये जाने वाले पेड़ो में पत्ती तथा फल में संक्रमण अधिक होता है। दूसरी प्रकार की ज्यादातर बीमारी सड़ने की होती है। फलों में ज्यादातर सड़ने की समस्या अधिक होती है।

वलप किट्ट

वलप किट्ट रोग ज्यादातर राजस्थान के उदयपुर जिला में देखा गया है। अभी हाल ही में उसे उत्तर प्रदेश के लखनऊ, प्रतापगढ़ में भी पाया गया है। इसके द्वारा फल तथा पत्ती में रोग उत्पन्न हुआ है। यह रेवेनोलिया इम्बालिका नामक कवक द्वारा फैलता है। इस रोग में पत्तियों तथा फलों में काले रंग के धब्बे पड़ते हैं फल परिपक्व होने से पहले ही गिर जाते हैं।

उपचार

कवकनाशी या घुलनशील सल्फर (0.4%) का छिड़काव एक महीने के अन्तराल में करना चाहिए।

मुरझाना

मुरझाना भी राजस्थान के आंवले के पेड़ों में देखा गया है। इसमें छाल का झड़ना, छाल का टूटना तथा मुरझाना आदि देखा गया है। ये फ्यूजेरियम नामक कवक के कारण होती है। इसके उपचार के लिए पेड़ को उचित मात्रा में पानी देना चाहिए तथा इसको ढककर रखना चाहिए।

नीली फफूंदी रोग

यह पेनीसिलेपम कवक के द्वारा होती है। सबसे पहले आंवला वाराणसी में देखा गया था। किन्तु अब ये पूरे भारतवर्ष में देखने को मिलती है, बीमारी जैसे–जैसे बढ़ती है तीन प्रकार के धब्बे दिखाई पड़ते हैं। पहले चमकदार पीले रंग के, फिर भूरे तथा बाद में काले या नीले हो जाते हैं। तथा इसमें एक पीले रंग का पदार्थ निकलना शुरू कर देता है। और सबसे अन्त में काले दानेदार। इसका स्वाद सब बेकार हो जाता है। इसके उपचार के वोरेक्स तथा सोडियम क्लोराइड (नमक का घोल) से देना चाहिए, इसको वेवस्टीन या टोपासीन (0.1%) देकर भी रोका जा सकता है, फल को मैथा तेल में डूबोकर फिर सुखाकर रखने पर भी इस बीमारी को रोका जा सकता है।

स्वच्छ रीट

इस बीमारी का मुख्य कारण कवक फोमायसीस फाइलेन्थिया होता है। इसे इलाहाबाद तथा फतेहपुर आदि जगह में पाया गया है। यह दिसम्बर से फरवरी के बीच अधिक फैलता है। इसके संक्रमण के 2–3 दिन के अन्दर काले धब्बे फल के ऊपर आ जाते हैं। तथा ये क्षेत्र पानी जैसा हो जाता है और 8 दिन के अन्दर पूरे फल को सड़ा देता है। जब फल शुरूवाती रूप में होता है तो इसका संक्रमण अधिक होता है। किन्तु बाद में इसके धव्वौती देखी गई है। इस बीमारी के लिए फल का छापल होना बहुत जरूरी है। इसके उपचार के लिए डी फोलटेन (0.15%) डाईथेन एम–45 या वेवस्टीन (0.1%) का छिड़काव फल तोड़ने के बाद करना चाहिए।

सड़ना

कभी–कभी फल में पानी नहीं होता है परन्तु फिर भी फल सड़ा हुआ प्रतीत होता है। इसका कारण फोमा ईमलिका तथा क्लोरोस्पोरियम है। इसके चमकदार भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। जो 1.0 सेमी० से 2.0 सेमी० तक होते हैं ये बाद में काले पड़ जाते हैं।

आंवला में किसी भी प्रकार के सड़ने को निम्न तरीके से दूर किया जा सकता है–

1. जब फल को तोड़ना हो तब कावेनडाजीम 0.1% को घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।
2. फल की तोड़ाई बहुत सावधानी पूर्वक करनी चाहिए जिससे फल

पर कोई धाव न हो।

3. फल को हमेशा साफ–सुथरी जगह पर रखना चाहिए।
4. जब फल का भण्डारण करना हो तो गैस का छिड़काव NCl_3 या ओजोन के साथ करने से सड़ना कम हो जाता है।
5. वोरेक्स या सोडियम क्लोराइड के घोल से भी इसके संक्रमण को रोका जा सकता है।

कीट

(अ) शुट गाल मेकर – जो नवजात सड़ी डाल होती है वह प्ररोह के अन्दर धाव के रास्ते से जाकर अन्दर ही अन्दर तथा बैठने के स्थान पर गांठ बनाती है और प्ररोह का विकास रूक जाता है। ये कीट ज्यादातर जुलाई से अगस्त के बीच में ज्यादा संक्रमण करते हैं। वैसे जब इसका संक्रमण हो तो प्रभावित भाग को तोड़ कर जला देना चाहिए। या 0.4% कार्बाइल या क्वीनालफॉस 0.2% का छिड़काव करना चाहिए।

(ब) छाल खाने वाली सुंडी – यह सुंडी पेड़ की छाल को खाती है तथा प्रभावित स्थान पर जाला बना हुआ प्रतीत होता है। इसके उपचार के लिए क्लोरोपापरीफास 0.15% या इण्डोसल्फान 0.25% के घोल प्रयोग करना चाहिए।

(स) माहू – जब माहू शिशु अवस्था में होता है तो यह आंवले की पत्ती तथा अन्य कोमल भागों को खाता है जिससे काफी नुकसान होता है। इसके नियन्त्रण के लिए डाइमेथेएट 0.15% या इण्डो–सल्फान 0.2% के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

जैविक नियन्त्रण

काइटोसीन का प्रयोग – जब आंवले का भण्डारण करना हो तो इसे काइटोसीन के घोल में डुबोकर सुखाकर एक महीने तक सुरक्षित किया जा सकता है। काइटोसीन का प्रयोग करने से फलों के ऊपर पाये जाने वाले कवक जो लाभदायक होते हैं जैसे यीस्ट भी बढ़ता है, जो सड़न रोकने में मदद करता है। काइटोसीन को पानी में 0.25% के अनुपात में घोलकर फलों को पहले डूबो दें और फिर इसे सुखाकर रखें तो काफी दिनों तक सुरक्षित रहता है।

तेल का प्रयोग – साइट्रिक फलों के छिलकों से निकाले गए तेल का प्रयोग आंवले के फलों को अधिक दिन तक सुरक्षित किया जा सकता है। मौसमी या सन्तरे के छिलकों से निकाले गये तेल को जब फलों पर स्प्रे करने से यह महीने भर तक ताजा बने रहते हैं। इसी के साथ लाभदायक यीस्ट को भी बढ़ाने करने का काम करता है।

लहसुनिया का रस – पत्तियों का रस या तने का रस भी आंवले के भण्डारण में उचित भूमिका निभाता है। लहसुनिया की पत्ती का 2% धोल बनाकर उसमें आंवले को 5 घंटे डूबोकर रखने से इसका भण्डारण 1 महीने तक किया जा सकता है। इसको पौधों पर भी स्पे् कर सकते हैं।

ट्राइकोडर्मा का प्रयोग – ट्राइकोडर्मा के पाउडर का घोल बनाकर उसमें फलों को सुरक्षित किया जा सकता है। जब भण्डारण करना हो तो फल तथा इसके घोल को आपस में मिलाकर रखने से काफी मात्रा में संक्रमण को रोका जा सकता है।

गर्म पानी विधि – अगर किसान ये सब नहीं कर सकता है तो आंवले को भण्डारण से पहले 1 मिनट के लिए उबालते हुए पानी में छोड़ देना चाहिए उसके बाद उसका भंण्डारण करना चाहिए जिससे 60–80% तक संक्रमण में कमी आ जाती है।

इस प्रकार आंवले का उपचार उपरोक्त किसी से भी किया जा सकता है। आंवले में बहुत से औषधि गुण होते हैं जो मानव के साथ एक न्याय करते हैं तथा रोगों को दूर करते हैं। इसलिए कहा गया है कि

"Eat one aonla daily keep doctor away"

जीवन में सुखी रहने के लिए दो शक्तियों का होना जरूरी है...
पहली सहन शक्ति...
और दूसरी समझ शक्ति

–अज्ञात

कृषि

समकक्ष समीक्षित

मृदा स्वास्थ्य कार्ड: किसानों के लिए योजना

शिवम सिंह[1], वी. पी. सिंह[1], महेंद्र प्रताप सिंह[2]*
ऋचा रघुवंशी[3], चंद्रकांत चौबे[4] और शक्ति ओम पाठक[5]

मृदा स्वास्थ्य कार्ड स्कीम (Soil Health Card Yojna) को 19 फ़रवरी 2015 में भारत सरकार द्वारा किसानों के लिए लाया गया है। इस योजना से भारत के वो सभी किसान बंधुओ के लिए है लेकिन विशेष रूप से उन किसान बंधुओ के लिए है जिनके खेतों में सही प्रकार से अनाजों का पैदावार नहीं हो पा रहा है। जिसका बहुत सारा करण है जो निमन्लिखित है :–

- पहला लोगों द्वारा गलत फसल /फसल चक्र का चुनाव, बीज/मृदा का सही शोध का तरीका।
- दूसरा लोगों को पता ना होना कि उनके खेत की मिटटी में कौन सा खाद या उर्वरक ज्यादा चाहिए और कौन सा कम, ना ही उन्हें पता है कैसे वो अपने मिटटी की उर्वरता शक्ति को बढ़ा सकते हैं।

इन कारणों को समझने के बाद हमारे माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने किसान भाईयो के लाभ हेतु मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना (Soil Health Card Scheme) को शुरू किया। इस योजना से सभी किसान भाई जो अपने खेत की मिटटी की जाँच करवाना चाहता है उन्हें अपने खेत की मिटटी को परिक्षण के लिए भेजने पर मृदा स्वास्थ्य कार्ड (Soil Health Card) प्रदान किया जाता है। मृदा परीक्षण किसान भाईयो अपने निकटतम जिला प्रयोगशाला करवा सकते है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड (Soil Health Card) की विशेषताएं

1. सरकार ने इस योजना के तहत पुरे भारत के 14 करोड़ से भी ज्यादा किसानों तक इस स्कीम से जोडने की सोच है।
2. यह योजना भारत के हर क्षेत्र में उपलब्ध है।
3. इस योजना से जुड़े हुए सभी किसानों को उनका मृदा स्वास्थ्य कार्ड (Soil Health Card) ऑनलाइन और प्रिंट कर के दिया जाता है। यह 12 भाषाओं में मौजूद है।
4. किसानों को रबी और खरीफ फसल की कटाई के बाद एक वर्ष में दो बार अपनी मिट्टी के नमूने लेने चहिये।
5. मृदा स्वास्थ्य कार्ड में मृदा के लगभग 12 रासायनिक गुणों का वर्णन किया गया है। इसमें पी. एच., विद्युत चालकता (ई. सी.), मिट्टी कार्बनिक कार्बन, उपलब्धित

[1]विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, सुल्तानपुर, ए. एन.डी.यू.ए.टी., कुमारगंज, अयोध्या
[2]विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनभद्र, ए.एन.डी.यू.ए.टी., कुमारगंज, अयोध्या
[3]शोध छात्र, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी
[4]शोध छात्र, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ
[5]सहायक अध्यापक, एसजीपी विश्वविद्यालय, गुरूग्राम हरियाणा
*Corresponding Author: shivambuat@gmail.com

Department of Agriculture & Cooperation
Ministry of Agriculture & Farmers Welfare
Government of India
Directorate of Agriculture
Government of Goa
SOIL HEALTH CARD
Soil Health Card No. : ____________
Name of Farmer : ____________
Validity : From________ To________

SOIL HEALTH CARD	
Farmer's Details	
Name	
Address	
Village	
Sub-District	
District	
PIN	
Aadhaar Number	
Mobile Number	
Soil Sample Details	
Soil Sample Number	
Sample Collected on	
Survey No.	
Khasra No. / Dag No.	
Farm Size	
Geo Position (GPS)	Latitude: Longitude:
Irrigated / Rainfed	

Name of Laboratory

SOIL TEST RESULTS

S. No.	Parameter	Test Value	Unit	Rating
1	pH			
2	EC			
3	Organic Carbon (OC)			
4	Available Nitrogen (N)			
5	Available Phosphorus (P)			
6	Available Potassium (K)			
7	Available Sulphur (S)			
8	Available Zinc (Zn)			
9	Available Boron (B)			
10	Available Iron (Fe)			
11	Available Manganese (Mn)			
12	Available Copper (Cu)			

Secondary & Micro Nutrients Recommendations

Sl. No.	Parameter	Recommendations for Soil Applications
1	Sulphur (S)	
2	Zinc (Zn)	
3	Boron (B)	
4	Iron (Fe)	
5	Manganese (Mn)	
6	Copper (Cu)	
General Recommendations		
1	Organic Manure	
2	Biofertiliser	
3	Lime / Gypsum	

International Year of Soils 2015
Healthy Soils for a Healthy Life

Fertilizer Recommendations for Reference Yield (with Organic Manure)

Sl. No.	Crop & Variety	Reference Yield	Fertilizer Combination-1 for N P K	Fertilizer Combination-2 for N P K
1	Paddy (Dhaan)			
2				
3				
4				
5				
6				

नाइट्रोजन, उपलब्धित फॉस्फोरस, उपलब्धित पोटेशियम, उपलब्धित सल्फर, उपलब्धित लोहा, उपलब्धित मैंगनीज, उपलब्धित तांबा, उपलब्धित जस्ता और उपलब्धित बोरान शामिल हैं।

6. हर किसान को उनके मिट्टी / मृदा का स्वास्थ्य कार्ड प्रति 3 वर्ष में दिया जाता है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड (Soil Health Card) में आपको निम्लिखित चीजों की जानकारी मिलती है–

1. मृदा का स्वास्थ्य की यह मिटटी फ़सल करने के लिए सही है या नहीं।
2. मिट्टी की विशेषताएं और सामान्य सिफारिशें।
3. मिटटी में उपलब्ध सभी पोषक तत्व।
4. मिट्टी में किन–किन खाद का किन–किन अनाज के फ़सल में कितना उपयोग करना चाहिए उसकी जानकारी।
5. मिट्टी की कुछ और अच्छी विशेषताएं।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड (Soil Health Card) मिलने पर किसानों को कई प्रकार के फायदे हैं–

1. इस स्कीम की मदद से किसानों को अपने खेत की मिटटी के बारे में सही स्वास्थ्य जानकारी मिल पायेगी। इससे वो मन चाहे अनाज / फ़सल कर सकते हैं।
2. मृदा स्वास्थ्य कार्ड हर 3 साल में सर्कार प्रदान करती है जिसके कारण किसान को अपने मिटटी के बदलाव के बारे में भी बीच–बीच में पता चलता रहेगा।
3. इस योजना के तहत किसानो को अच्छी फ़सल उगाने में मदद मिलेगी जिससे उन्हें और देश दोनों का फायदा होगा।
4. इससे किसानों को भी आगे बढ़ने का मौका मिलेगा और देश उन्नति की ओर बढेगा।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड स्कीम कैसे काम करता है?

1. सबसे पहले एक अधिकारी आपके खेत की कुछ मिट्टी का एक सैंपल लें कर उसे Sample Bag में भरते हैं।
2. उसके बाद उस मिट्टी को परिक्षण के लिए लेबोरेटरी में भेजा जाता है।
3. वहां विशेषज्ञ मिट्टी की जाँच करते हैं और मिट्टी के बारे में सभी जानकारियाँ प्राप्त करते हैं।
4. उसके बाद वे रिपोर्ट तैयार करते हैं कि कौन से मिट्टी में क्या ज्यादा और क्या कम।
5. उसके बाद इस रिपोर्ट को एक–एक करके किसान के नाम के साथ ऑनलाइन अपलोड किया जाता है जिससे की किसान अपने मिटटी का रिपोर्ट जल्द से जल्द देख सके और उनके मोबाइल पर भी इसकी जानकारी दी जाती है। किसान ऑनलाइन अपने मृदा स्वास्थ्य कार्ड (Soil Health Card) को सामने दिए हुए लिंक पर देख सकते हैं – https://soilhealth.dac.gov.in/
6. बाद में किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड (Soil Health Card) Print करके घरों तक पहुँचाया जाता है।

धर्म और संस्कृति

पृथ्वी पर शिव के प्रतिनिधि हैं.. पेड़–पौधे

–अज्ञात

वनस्पति उपासना यानि पेड़–पौधों की पूजा हमारे संस्कृति का मुख्य अंग है। यह पद्धति अकारण नहीं शुरू हुई है। पेड़ों से हमें आक्सीजन, भोजन और जल तीनों मिलता है और इन्हीं से हमारा जीवन चलता है...।

ऐतरेय और कौषितकि ब्राह्मण ग्रंथ में "प्राणौ वै वनस्पतिः"। (ऐतरेय 2.4, कौषितकि 12.7) कहा गया है... जहां वनस्पतियों से हमारे जीवन को संचालित करने वाले तत्व मिलते हैं, वहीं वनस्पतियां ऐसे तत्वों को भी समाप्त करती हैं, जो हमारे जीवन को नुकसान पहुंचाते हैं। इसीलिये वनस्पतियों को पृथ्वी पर शिव की प्रतिनिधि माना जाता हैं, जोकि कार्बन डाइ आक्साइड का हलाहल पीकर हमें जीवन अमृत आक्सीजन देती हैं...।

शुक्लयजुर्वेद का एक उदाहरण है– "नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः।

क्षेत्राणां पतये नमः।

वनानां पतये नमः।

वृक्षाणां पतये नमः।

ओषधीनां पतये नमः।

कक्षाणां पतये नमः"।

(यजुर्वेद 16.17.18)।

इसमें शिव को वृक्ष, वन, ओषधियों इत्यादि का स्वामी का कहा गया है.... देवताओं को उनके गुणानुरूप जीवों और पदार्थों का स्वामी नियुक्त किया गया है... यदि शिव वनस्पतियों के स्वामी कहे गये हैं तो इसका मतलब यह हुआ कि वनस्पतियों का गुण भी शिव जैसा होना चाहिये... शिव का शिवत्व बहुत व्यापक है....शिव का मलतब होता है सुंदर और वनस्पतियां भी पृथ्वी का श्रृंगार करती हैं... सुंदरता बढ़ाती हैं.. इस तरह से वनस्पतियों का व्यवहार उनको शिव का प्रतिनिधि साबित कर देता है.. वहीं दूसरी ओर शिव विश्वपूज्य व सर्वपूज्य इसलिये हुये क्योंकि उन्होने विष पीकर संसार की रक्षा की और अमृत अन्य के लिये छोड़ दिया... विष पीकर अमृत छोड़ देना भी शिवत्व है। हमारे पर्यावरण में वनस्पतियों की भूमिका शिव सरीखी है। वनस्पतियां भी कार्बन डाइ आक्साइड जैसे विष को ग्रहण कर हमारे लिये आक्सीजन जैसी अमृत छोड़ देती हैं... यह बताने की आवश्कता नहीं है कि आक्सीजन के बिना जीवन की परिकल्पना नहीं की जा सकती.. एक बात और समझने की है, ओषधियां भी पेड़–पौधों से ही मिलती हैं.. ओषधियों के बारे में हमारे ग्रंथों में कहा गया है कि इनका जन्म देव के रौद्र रूप से हुआ है, इसलिये ओषधियां दोषों और विकारों को समाप्त करने में सक्षम है.. यह भी शिव का ही गुण हैं... सरल सी बात है कि वही शिव का जो स्वभाव है, वनस्पतियां का भाव है... ऐसे विचार कीजिये कि हमारे आस पास कितने ही शिव हैं...।

वेदों में पर्वत, जल, वायु, वर्षा और अग्नि को पर्यावरण का शोधक कहा है और इन सभी पर्यावरण शोधकों का मूल तो वनस्पतियां ही हैं। वनस्पतियों के कम होने से सबसे पहला प्रभाव आक्सीजन के स्तर पर पड़ता है।

वेदों में दो प्रकार के वायु की चर्चा है प्राणवायु और अपान वायु। प्राणवायु से जीवन का संचार होता है और अपानवायु से सारीरिक दोषों का निवारण होता है। उदाहरण देखें–

"आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः।

त्वं हि विश्व भेषज देवानां दूत ईयसे।।"

(अथर्ववेद 4.13.3)

वायु को विश्वभेषज कहा गया है... यानि की वर्ल्ड डाक्टर...अथर्ववेद में वायु और सूर्य को रक्षक के रूप में वंदना की गई है। उदाहरण देखें–"युवं वायो सविता च भुवनानि रक्षयः।"

(अथर्ववेद 4,24,3)।

अथर्ववेद शुद्घ वायु को औषधि मानता है। ताजी हवा शरीर में प्रवेश करते ही हम तरोताजा हो जाते हैं। बहुत से रोग बहुत से कष्ट ऐसे ही कट जाते हैं..लेकिन जब हमने पेड़–पौधों के महत्व को नकार दिया और हमें संकट से बचाने वाली वनस्पतियों के लिये हम संकट बने तो पर्यावरण का तंत्र खराब हो गया। हम आज जहर पीने को मजबूर हैं। वेदों में प्रदूषण के कारकों को क्रव्याद यानि जीव को सुखाकर निर्जीव करने वाला कहा गया है.. उदाहरण देखें–

"ये पर्वताः सोमपृष्ठाः आपः।

वातः पर्जन्य आदग्निनस्ते क्रव्यादमशीशमन।"

(अथर्ववेद 3.21.10)

तो वहीं यह भी कहा गया है कि यह वनस्पतियों के अभाव में पनपते हैं... जहां आज हम उत्सर्जन कम करने पर जोर दे रहे हैं तो वहीं वेदों ने शोधन बढ़ाने पर जोर दिया है। अथर्ववेद में तमाम ऐसे वनस्पतियों की सूची मिलती है जोकि पर्यावरण के शोध के रूप में काम करते हैं। इसमें अश्वत्थ (पीपल), कुष्ठ (कठ), भद्र और चीपुत्र (देवदार और चीड़), प्लक्ष (पिलखन और पाकड़), न्यग्रौध (बड़), खदिर (खैर), उदुम्बर (गूलर), अपामार्ग (चिरचिरा), और गुग्गुल (गूगल) हैं।

अथर्ववेद में कहा गया है कि इन वृक्षों से वायु शुद्घ होती है और पर्यावरण का संतुलन सही बना रहता है... हमारे प्राचीन साहित्य में वृक्षारोपण को बल दिया गया है। अब तक हमने कई प्रथायें सुनी हैं कि पुत्र होने पर वहां एक वृक्ष रोपा जाता है। जबकि हम नहीं जानते कि मस्त्य पुराण में दशपुत्रसमोद्रुमः' कहकर वृक्षों का महत्व बताया गया है।। दशपुत्रसमोद्रुमः का मतलब है, एक वृक्ष दश पुत्रों के समान है... ऐसा उदाहरण विश्व के अन्य साहित्यकोश से या संस्कृति से नहीं मिल सकता।

पर्यावरण

समकक्ष समीक्षित

जल संरक्षण में भारतीय ज्ञान परम्परा

*मंजुल त्रिवेदी[1], अरविन्द कुमार सिंह[2] एवं आदित्य आभा सिंह[3]**

शोध सार

भारतीय ज्ञान परम्परा में पर्यावरणीय विमर्श सदैव से ही केंद्रीय विचार का तत्व रहा है। हमारे पूर्वज प्राचीन काल से ही धारणीय विकास के भाव को आत्मसात करते हुए जीवन यापन की प्रेरणा देते रहे हैं। प्रकृति के प्रति श्रद्धा भाव रखते हुए उसके सहचर के रूप में अपने अस्तित्व को स्वीकारना तथा तदनुरूप आचरण करना हमारी समृद्धशाली परम्परा रही है। प्राचीन काल मे पर्यावरण संरक्षण के महत्वपूर्ण मुद्दों को धर्म के साथ जोड़कर उनकी व्यवहारिकता स्थापित करने का कार्य किया गया है।

प्रस्तुत शोध आलेख में महत्वपूर्ण पर्यावरणीय विमर्श "जल संरक्षण" के भाव को शास्त्रीय परम्परा एवं प्राचीन प्रणालियों में किस रूप में स्थान प्राप्त था इसका विमर्श प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत लेख में धर्मग्रंथों, ऐतिहासिक ग्रंथों आदि में वर्णित विषयवस्तु का विश्लेषण करके निष्कर्षों का निर्वचन किया गया है।

पिछली लगभग तीन–चार शताब्दियों से पर्यावरणीय विमर्श मानव के चिंतन का केंद्र बिंदु रहा है। जिसका कारण इस समयावधि में संसाधनों का अविवेकपूर्ण प्रयोग करते हुए अंधाधुंध विकास की प्रवृत्ति रही है। इस पृथ्वी पर मानव के अतिरिक्त लगभग 10 मिलियन से भी अधिक जीवों की प्रजातियां है जिनका सह–अस्तित्व इस पृथ्वी पर है। विकास को तत्पर मानव की असम्बद्ध क्रियाओं का दुष्परिणाम आज अन्य जीवों को भी भुगतना पड़ रहा है। पर्यावरणीय चिंतन आज नीति निर्धारण में विशेष महत्व का विषय बन गया है।

आज मानव अपने और पृथ्वी के अस्तित्व को बचाने के लिए विवशतावश पर्यावरण संरक्षण के भाव को स्वीकार कर रहा है। पूरे विश्व में संकट सामने देखकर पर्यावरण के प्रति जो दृष्टिकोण अपनाया गया है उस दृष्टिकोण का परिप्रेक्ष्य भारतीय ज्ञान परंपरा में आदिकाल से ही है। भारत के प्राचीनतम ग्रंथ वेद हो या परवर्ती वैदिक साहित्य, सभी ने प्रारंभ से ही पर्यावरण के प्रति अपना श्रद्धा भाव रखते हुए आचरण करने की प्रेरणा दी है। भारतीय ज्ञान परंपरा में सदैव से ही सभी प्रजातियों को समान अधिकार प्रदान करते हुए एक दूसरे के अधिकारों को सुनिश्चित करने वाला कहा गया है जो इन पंक्तियों में निहित है–

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ।।

अर्थात जड़–चेतन प्राणियों वाली यह समस्त सृष्टि परमात्मा से व्याप्त है। मनुष्य इसके पदार्थों का आवश्यकतानुसार भोग करे, परंतु 'यह सब मेरा नहीं है के भाव के साथ' उनका संग्रह न करे।

जल प्रकृति के द्वारा मनुष्यों को दिया गया एक अनोखा उपहार है। जल एक अद्वितीय नवीकरणीय संसाधन है, जो सभी प्रकार की वनस्पतियों एवं जीव– जंतु को बनाए रखने के लिए अपरिहार्य है। कृषि उत्पादकता, औद्योगिक विकास और प्रकृति की वहनीयता इस पे आश्रित है और इसकी भरपाई करना असंभव है। जल हमें जीवन देता है, इसलिए जल की प्रमुख स्रोत नदियों को पवित्र मान कर उनकी पूजा–अर्चना की परंपरा भारत में सदियों से चली आ रही है। भारत को 25 से अधिक नदियों की समृद्ध प्रणाली का आशीर्वाद प्राप्त है जिसमें यहाँ कई सहायक नदियों के साथ प्रमुख नदियाँ बहती हैं। हिमालय की नदियाँ जैसे गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, सिंधु और उनकी सहायक नदियाँ एशियाई महाद्वीप में पानी के सबसे समृद्ध क्षेत्रों और औसत जल उपज में से एक हैं। ये नदी प्रणालियाँ प्रायद्वीपीय नदी प्रणालियों से दोगुनी हैं, जो इसके महत्व को दर्शाती हैं। इसके अलावा देश के सतही जल एवं भूजल भी एक महत्वपूर्ण संसाधन है।

वैश्विक आबादी और अर्थ–व्यवस्थाओं में मीठे पानी की मांग तेजी से बढ़ रही है, किन्तु जलवायु में परिवर्तन ने संचयी प्रतिकूल प्रभाव पैदा किया है जिसने जल संसाधन की गुणवत्ता, मात्रा, उपलब्धता और वर्षा की तीव्रता को प्रभावित किया है। भारत के जल संसाधनों में तेजी से गिरावट के कारण अस्थिर उपयोग, अत्यधिक उपयोग और प्रदूषण एवं अनियमित जलवायु परिवर्तन इसका कारण हैं। घटते जल संसाधनों का प्रबंधन एवं बनाये रखना सबसे बड़ी चुनौती है। तेजी से बढ़ती आबादी, पानी की बढ़ती मांग और तेजी से हो रहे बदलाव को देखते हुए जलवायु, टिकाऊपन के लिए एक पूर्ण प्रमाण, दीर्घकालिक योजना और रणनीति की आवश्यकता है। अतः अत्यंत आवश्यक है की मूल्यांकन, भंडारण, रीसाइक्लिंग, उत्कृष्ट योजना एवं विकास, जल के कुशल उपयोग एवं प्रबंधन है।

हम इस तथ्य पर प्रकाश डालना चाहते हैं कि भारत के गौरवशाली ज्ञान परंपरा में जल संरक्षण का भाव अत्यंत प्रमुखता के साथ दिखाई पड़ता है। भारत की संस्कृति में पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति संवेदना जागृत करने हेतु सामान्य जन के व्यवहार में इस भाव को आत्मसात कराया जा सके, इस हेतु, अनेक मान्यताओं का अनुशीलन

[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, बी एस एन वी पी जी कालेज, लखनऊ
[2]वैज्ञानिक–डी, प्रिकैम्ब्रियन पुराजैविकी प्रयोगशाला, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ
[3]*पत्राचारः आदित्य आभा सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226007
ईमेलः abha2512.singh@gmail.com

विभिन्न ग्रंथों में वर्णित मन्त्रों, आख्यानों एवं नीतिपरक श्लोक आदि के माध्यम से किया गया है। जल की महिमा को बताते हुए भारतीय संस्कृति के आदि ग्रंथ ऋग्वेद में जल की महत्ता बताते हुए उसे माता के समान बताया गया है जो कि सभी को शक्ति प्रदान करता है एवं जहां भी जिस रूप में है संरक्षण करने योग्य है:

आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृत्पवः पुनन्तु।

आज आधुनिक विश्व में जल के महत्व और भावी संभावनाओं को देखते हुए अनेक पद्धतियों द्वारा जल संचयन तथा संरक्षण की नवीन पद्धतियों का विकास तकनीकी की मदद से किया जा रहा है। यदि हम समय रहते इस भाव को समझ जाते तो हमारे जल भंडार में न्यूनता न आती। भारतीय ज्ञान परंपरा में जल संरक्षण के भाव को स्थापित करते हुए प्रत्येक प्रकार के जल के संरक्षण और संचयन को प्रोत्साहित करते हुए सामान्य जन में इस हेतु चेतना विकसित करने का अनवरत प्रयास किया गया है। अथर्ववेद में वर्षा के जल की विशेष महत्व बताते हुए इसको संरक्षित किए जाने का निर्देश दिया गया है–

शिवा नः संतु वार्षिकीः।

भारतीय परंपरा में जल की महत्ता को स्थापित करते हुए शतपथ ब्राह्मण के 11वें कांड में कहा गया है कि परमात्मा ने जब इस सृष्टि की रचना की तो सर्वप्रथम उन्होंने जल को बनाया–

आपो वा इदमग्रे सलिलमेवास।।

धारणीय विकास आज के विश्व का एक प्रमुख नीति निर्धारक बिंदु बन गया है किंतु भारत की सनातन संस्कृति में प्रारंभ से ही प्राकृतिक संसाधनों के विवेक सम्मत उपभोग की बात कही गई है। यजुर्वेद में जल एवं पर्यावरण संरक्षण के भाव को स्थापित करने की कोशिश करते हुए कहा गया है कि– हे राजन, आप अपने राज्य के स्थानों में जल और वनस्पतियों को हानि न पहुँचाओ, ऐसा उद्यम करो जिससे हम सभी को जल एवं वनस्पतियाँ सतत रूप से प्राप्त होती रहे–

"मायो मौष धीहि ऊं सीर्घाम्नोः घाम्नो राजस्तो वरूण नो मुंच।"

चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के कृषि पाराशर में वर्षाजल एवं वर्षा प्रणाली की विस्तृत वर्णन किया गया है। जिसमें वर्षा के जल के संग्रहण की अनेक विधियों का वर्णन किया गया है उदाहरणतः खेतों में वर्षा जल संचयन हेतु किन प्रकार के बांधों को बनाए जाने की आवश्यकता है इसका विस्तृत वर्णन उपरोक्त ग्रंथ में प्राप्त होता है। कौटिल्य के महान ग्रंथ अर्थशास्त्र में भी जल प्रबंधन पर विशेष जोर दिया गया है तथा वर्षा जल के मापन हेतु द्रोण नामक यंत्र की संकल्पना की गई है।

प्राचीन भारत में जल प्रबंधन की अनेक तकनीक का वर्णन विभिन्न ग्रंथो के माध्यम से मिलता है। भारतीय आर्ष साहित्य के मूल ग्रंथ वेदों में भी यत्र तत्र जल प्रबंधन की तकनीकी का उल्लेख किया गया है। वैदिक युग में सीढ़ीनुमा पहाड़ियों पर वर्षा के जल का संचयन करके उन्हें नहरों के माध्यम से अन्य आवश्यकता युक्त क्षेत्र तक जल पहुंचने का कार्य किया जाता था। रेगिस्तानी क्षेत्र में कृत्रिम नहरों से सिंचाई किए जाने का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। अथर्ववेद में उल्लेख मिलता है कि जो लोग नदियों, तालाबों, कुंओ आदि के माध्यम से वर्षा के जल का संचयन कर उसे कृषि एवं दैनिक जीवन में उपयोग करते हैं वह सदैव समृद्ध रहते हैं। इनके अतिरिक्त प्राचीन भारत में जल संरक्षण के लिए विभिन्न संरचनाओं यथा– तालाब, जोहर, बावड़ी, झालर, कुंड, जल मंदिर आदि का उल्लेख मिलता है।

अतः इससे यह जहिर होता है कि जीव एवं प्रकृति की संरचना में जल की महहता कितनी है। प्रचीन पद्धतियों से सीख लेते हुए हमें अपने भविष्य के बारे में विचार करना चाहिये। जल स्रोतों का संरक्षण प्रचीन पद्धतियों कें अनुसार आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल करते हुए किया जाना उचित रहेगा । हमारा देश कृषि प्रधान देश है जो मानसून वर्षा पर निर्भर है। वर्षा जल संचयन भूजल स्तर को कम होने के बजाय और अधिक बनाए रखने में सक्षम बनाता है। सूखे के प्रभाव को कम करता है। कई देश, विशेष रूप से शुष्क वातावरण वाले देश, स्वच्छ पानी के सस्ते और विश्वसनीय स्रोत के रूप में वर्षा जल संचयन का उपयोग करते हैं। भारत वर्ष में बढ़ते आबादी को देखते हुए उचित जल संचय नीति प्राचीन पद्धतियों को ध्यान मे रख कर बनाने पर बल दिया जाना चाहिये।

संदर्भ

ईशोपनिषद् 1.1

ऋग्वेद 10.17.10

अथर्ववेद 1.6.4

शतपथ ब्राह्मण 11.1.6.1

यजुर्वेद 6/22

विश्वबंधु सं0 (1962) : अथर्ववेद संहिता, विश्वेश्वरानंद वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर, उत्तर प्रदेश ।

चौबे, बी0 बी0 (1980) : शतपथ ब्राह्मण, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली ।

लिमये वी0पी0 और (1958) : ''छादोग्योपनिषद', वैदिक संशोधन, मॉडल, पूना।

कुमार, आर., सिंह, आर. डी., शर्मा, के. डी., 2005। भारत के जल संसाधन। करेंट साइंस, 794–811.

सिंह, ए. ए., सिंह, ए. के., २०२१। जल संसाधनों पर जलवायु नियंत्रण और उसका प्रबंधनः भारतीय परिप्रेक्ष्य में सतत विकास की चुनौतियाँ और संभावनाएँ। इनः थोकचोम, बी., किउ, पी., सिंह, पी., अय्यर, पी. के., (इडीएस।), वैश्विक जलवायु परिवर्तन के युग में जल संरक्षण, एल्सेवियर, पीपी। 121–145. https://doi-org/10-1016/B978-0-12-820200-5.00015-4

संस्कृत नवकाव्य

सृजनात् निर्माणपर्यन्तम्

गणेश शंकर बाजपेयी

माने चापि अपमाने च
जयपराजययोः स्थले
अहं निरन्तरं याति
पतित्वा पुनरुत्थितः॥

यत् प्राप्तं तत्तथैव मे
नष्टं च न मे विषादकः
आगतः किमस्ति मम
गमनं भयहेतुना न हि।
यः सहस्रं क्षणं गतः
स एव मे नवनीतः॥

नवमार्गान् निर्माय गतः
शून्यतः आगतः सदा
नवसृजने गतिं लभे
आनन्दानन्दं अहं भवामि।

अहं अत्र अपि तत्र अपि
कदाचित् भूमौ नभस्यपि
कदाचित् जले जलेन सह
निरन्तरं कला प्रवर्तते॥

इदानीं आरभे अग्रगमनम्
अनन्तशुभकामनया युतः
यदा यदा आग्रे गच्छामि
नवसृजनस्य मम कामना॥

सृजन से निर्माण तक (हिंदी भावानुवाद)

क्या मान में, अपमान में
हां जीत और हर हार में
मैं निरंतर बढ़ता गया
गिर गिर कर मैं उठता रहा

जो मिल गया तो भी सही
जो खो गया तो गम नहीं
आया था तो क्या पास था
जाने का कोई डर नहीं
जो साथ में क्षण भर चला
वो ही मेरा नवनीत है।
नई राहें बनाता मैं चला

हां शून्य से आगे बढ़ा
नव सृजन में जब गति मिली
आंनद आनंदम मैं भया
मै यहां हूं हां वहां हूं
कभी धरा पर कभी हवा में
कभी जल के साथ मै जलजला
मै निरंतर बढ़ती कलां
आगे की शुरुआत अब करूं
अग्रिम अनन्त शुभकामना
मै जब भी आगे बढ़ूंगा
नूतन सृजन मनोकामना

झीनी–झीनी बिनी चदरिया

झीनी झीनी बीनी चदरिया।।
काहे का ताना काहे कै भरनी, कौने तार से बीनी चदरिया।
इंगला पिंगला ताना भरनी, सुषमन तार से बीनी चदरिया।।
आठ कँवल दल चरखा डोलै, पाँच तत्त गुन तीनी चदरिया।
साईं को सियात मास दस लागे ठोकर–टोक के बीनी चदरिया।।
सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी, ओढ़ी के मैली कीनी चदरिया।
दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया।।

–कबीर

एल्डिको उद्यान II, लखनऊ ;
ईमेल : gsbajpai1591963@gmail.com

विचार

योग और योग दिवस

गिरीश पाण्डेय, IRS

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया जा रहा है, आप सब को बधाइयाँ और शुभकामनाएँ।

आइए पहले योग को समझें, जानें, जो बहुत सरल है, नैसर्गिक है जबकि अक्सर लोग इसे कठिन मानते हैं या समझने में भूल करते हैं।

योग का एकमात्र अर्थ (गणित, विज्ञान, जीवन, धर्म, अध्यात्म सब में) है जोड़ना, जुड़ना, जोड़ते/जुड़ते चले जाना. जब हम समस्त परिवार, समाज, प्रकृति, देश धरती और सृष्टि से जुड़ाव महसूस करते हैं तब हम योग कर रहे होते हैं .

और इस योग का कीमिया या फेविकोल है, संवेदना .जब हम सबके सुख–दुःख को अपना समझते हैं तभी हमारा सबसे जुड़ाव होता है .हमारा हाथ तभी बाकी शरीर से स्वस्थ रूप से जुड़ा है जब वह बाकी शरीर के प्रति संवेदनशील है.यदि वह बाकी शरीर के प्रति संवेदनशील नहीं है तो या तो बीमार है उसे लकवा हो गया है या वह बाकी शरीर से अलग हो गया है, अब जुड़ा ही नहीं है. तो योग का वास्तविक अर्थ है सबसे जुड़ना, जुड़ाव महसूस करना संवेदना के साथ,संवेदना के द्वारा .और इसका उल्टा है बांटना, बंटना, बांटते चले जाना तरह तरह के खांचों में, जाति के, धर्म के, क्षेत्र के, कार्य के और न जाने कितने अनगिनत खांचे .

बहुत से लोग जीवन और अध्यात्म को अलग अलग मानते हैं, लेकिन योग को आत्मसात कर लेने पर ये स्पष्ट हो जाता है कि दोनों एक ही हैं, बस नज़रिया अलग अलग है।

मेरी एक छोटी सी कविता है –

'अनंत होकर भी

सीमित महसूस करते हुए व्यवहार करना

जीवन है।

और सीमित होकर भी

अनंत महसूस करते हुए व्यवहार करना अध्यात्म है।'

एक मित्र ने पूछा ईश्वर पाने का मार्ग क्या है ? क्या सत्य आचरण ही ईश्वर को पाने का मार्ग है ? या क्या गायत्री मंत्र ईश्वर को पाने का मार्ग है ? मैंने लिखा आइए पहले हम ये जान लें की ईश्वर या ब्रह्म क्या है ? उसका हमारा रिश्ता क्या है ? फिर शायद मार्ग की ज़रूरत ही न रह जाए !

आइए ये कविता आत्मसात करें–

"दर्द से अहम् ब्रह्मास्मि

ईश्वर ने वह सबसे बड़ी निधि

सबसे बड़ा उपहार

जो हमें दिया है

जिसकी वजह से हमारा शरीर

वैसे ही बना हुआ है

जैसा कि था जन्म के समय में;

हाँ थोडा बहुत बढ़ जरुर गया है;

लेकिन अनुपात वही है;

वह निधि है पीड़ा, दर्द.

दर्द महसूस होता है

इसलिए हम छेडछाड नहीं करते

शरीर को दर्द महसूस होता है

इसलिए हम बचने की कोशिश करते है

देखभाल करते हैं.

जहाँ पीड़ा नहीं महसूस होती

हम अहंकार के नाम पर

अलग दिखने के नाम पर

क्या क्या भेष और स्वांग बनाते हैं

बालों को काटने में दर्द नहीं होता

तो कितने कितने चित्र विचित्र

बालों के स्वरुप मिलते हैं,

डिज़ाइन मिलती हैं.

यदि शरीर को दर्द नहीं मिला होता

तो आज हमारे सामने

कितने–कितने तरह के शरीर होते

कितने रूप

कितनी डिजाइनें.

तो पीड़ा ने ही हमारे शरीर को सीमा दी है,

विस्तार दिया है,

और परिभाषा दी है.

हमारा शरीर वहां तक है

हम वहां तक हैं

जहाँ तक हमें पीड़ा महसूस होती है.

यदि अब हम अपने शरीर से बाहर की यात्रा करें

तो दर्द की जगह पर वह ईश्वरीय उपहार का रूप ले लेता है

संवेदना का, दूसरे का दर्द महसूस करने की क्षमता का.

हम जिसका भी दर्द महसूस करते हैं

वह हमारे शरीर का हिस्सा हो जाता है,

हमारा विस्तृत शरीर हो जाता है.

हमारा विस्तार वहां तक है

हम वहां तक हैं

हमारा विराट शरीर वहां तक है

जहाँ तक की संवेदना हमें महसूस होती है.

यदि हम अपनी संवेदना के विस्तार को बढ़ाते जाएँ

यहाँ तक की

पूर्व प्रधान मुख्य आयकर आयुक्त, बी –19, सेक्टर ओ, अलीगंज, लखनऊ
ईमेल : gnpande@gmail.com

सारा समाज, सारे लोग
सारा विश्व, पूरी प्रकृति
और सारा ब्रम्हांड उसमे शामिल हो जाए
सबकी संवेदना म महसूस कर सकें
सबसे जुड़ाव हम महसूस कर सकें
तो पूरा ब्रम्हांड हमारा शरीर हो जाता है
हमारा विस्तार हो जाता है;
और फिर हम महसूस कर सकते हैं
अहम् ब्रह्मास्मि.
हम ब्रम्ह हैं
हम ब्रम्हांड हैं."(मेरे कविता संग्रह 'धरती जानती है' से)

अर्थात ईश्वर एक विराट जीवंत शरीर है और हम उसके जीवंत अंग! फिर मार्ग की ज़रूरत होगी ? आपकी ऊँगली आपका अंग है, आपको पाने के लिए उसे किसी मार्ग की आवश्यकता होगी? वह तो हमेशा आपको पाए ही हुए है और आप भी उसको पाए ही हुए हैं।

मेरी इस कविता का ध्यान करिए–

"साधना की पूर्णता
जब हम ईश्वर के किसी अंश को
पाने की कोशिश कर रहे होते हैं
तो हमें साधना करनी पड़ती है।
लेकिन जब हम
पाना चाहते हैं सम्पूर्ण ईश्वर को
तो हमें कोई साधना नहीं करनी पड़ती
उसे तो हम हमेशा पाए ही हुए हैं ;
ठीक वैसे ही जैसे यदि हम
धरती के किसी खंड को पाना चाहें
तो हमें साधना करनी पड़ेगी,
लेकिन यदि हम पूरी धरती को पाना चाहें
तो हम जहाँ भी है जैसे भी हैं पाए ही हुए हैं।"
(मेरे कविता संग्रह 'धरती जानती है' से)

बस एहसास करना ही पाना है।

और उस एहसास के बाद असत्य आचरण असम्भव है।

गायत्री मंत्र उस एहसास तक पहुँचाता है।

ईश्वर का विशुद्ध विज्ञान स्वरूप होना यही है कि वह एक विराट क्रिया मय स्वरूप है जिसमें सृष्टि, ऊर्जा (शक्ति)और काल सभी कुछ शामिल हैं और उसके अंग के रूप में हम भी शामिल हैं।

आजकल हम शारीरिक क्रियाओं को जिन्हें आसन कहा जाता है उन्हें ही योग समझने की भूल कर रहे हैं . आसन तो पतंजलि के द्वारा समाधि की अवस्था तक की यात्रा का एक कदम हैं जिसके माध्यम से शरीर को शुद्ध और स्वस्थ रखने में मदद मिलती हैं। हाँ आसन करते समय अगर समस्त ब्रह्माण्ड से जुड़े होने का या उस तरफ़ अग्रसर होने का भाव भी मानसिक रूप से चलता रहता है तो वह मात्र आसन न रहकर योगासन हो जाता है।

योग को समझने के बाद ही ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्म योग का वास्तविक अर्थ समझ में आता है . दरअसल जब ज्ञान,भक्ति या कर्म सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण के लिए सम्पूर्ण सृष्टि से जुड़े होने के भाव के साथ होते/किए जाते हैं तभी वे ज्ञानयोग, भक्ति योग और कर्म योग होते/ बनते हैं।अन्यथा वे महज़ ज्ञान, भक्ति और कर्म ही होकर रह जाते हैं।

अपनी बुद्धि द्वारा सृष्टि में व्याप्त एकात्म का एहसास, पूरी सृष्टि एक विराट जीवंत शरीर है और हम उसके जीवंत अंग है इस सच्चाई का एहसास ही ज्ञान योग है.

पूरी सृष्टि के प्रति प्रेम, समर्पण, श्रद्धा, संवाद और संवेदना का भाव रखना ही भक्ति योग है .

पूरी सृष्टि के प्रति संवेदनात्मक जुड़ाव महसूस करते हुए कार्य करना, सर्व हित में कार्य करना, सबके सुख दुःख को समझना, सबका ध्यान रखना,किसी को विरोधी न मानना, किसी को पीड़ा न पहुंचाते हुए यथासंभव जीवन यापन करना, यही कर्म योग है.

वास्तव में ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग तीनों ही एक दूसरे के पूरक हैं और जीवन में पूर्णता और आनंद तभी आता है जब तीनो योगों को समझा और और उन पर एक साथ अमल किया जाता है .

योग का अपने अंदर घटित कर लेने के बाद व्यक्ति की जीवनशैली कैसी हो जाती है वह संत कबीर के इस पद में देखिए –

"साधो सहज समाधि भली,
गुरू प्रताप जा दिन से जागौ, दिन–दिन अधिक चली।
जहँ–जहँ डोलौं सो परिकरमा, जो कुछ करौं सो सेवा।
जब सोवौं तब करौं दण्डवत, पूजौं और न देवा।
कहौं सो नाम, सुनौं सो सुमिरन, खाव–पियौ सो पूजा।
गिरह–उजार एक सम लेखो, भाव मिटावहु दूजा।
आँख न मूदौं; काम न रूँधौं, तनिक कष्ट नहिं धारौं।
खुले नैन पहचानौं हँसि–हँसि, सुन्दर रूप निहारौं।
शब्द निरन्तर से मन जागा, मलिन वासना त्यागी।
उठत–बैठत कबहु न छूटै, ऐसी तारी लागी।
कहैं कबीर यह उन्नमन रहनी, सो ही परगट गाई।
सुख–दुख से कोई परे परमपद, तेहि पद रहा समाई।

–सन्त कबीर

कबीर के इस पद का भाव या मूल मंत्र है दृष्टि की सम्पूर्णता और विशालता और जीवन की सहजता और सरलता।सादा जीवन, सादा विचार और सहज दृष्टि। जब दृष्टि सहज होती है, सरल होती है तो स्वतः ही सब कुछ दिखने लगता है ;संपूर्णता और विशालता अपने आप उसमें आने लगती है।

भाव यह है कि सहज समाधि बहुत भली है, प्यारी है, ज़रूरी है। किसी गुरु, सत्संग या आंतरिक साधना से जब हम जाग जाते हैं, आँखें खुल जाती हैं, आँखों की पट्टियाँ हट जाती हैं तो इसका अभ्यास होता ही होता जाता है

और ये खुद ही बढ़ती चली जाती है, सघन होती चली जाती है।

तब हम जहाँ जहाँ चल रहे हैं, जो जो यात्राएं कर रहे हैं सब उसी विराट सम्पूर्ण ईश्वर की परिक्रमा बन जाती है, जो कुछ भी इस शरीर से करते सब उसी की सेवा बन जाता है।

जब सोते या लेटते हैं, तो वह दंडवत हो जाता है; और फिर किसी छोटे या सीमित देवता की नहीं बल्कि उस संपूर्ण ईश्वर की, विराट ईश्वर को ही पाने और पूजने की भावना रहती है, उसी को पूजते हैं।

गृहस्थ और संन्यासी दोनों में भेद नहीं दिखता, सब एक जैसे दिखने लगते हैं और परायेपन का भाव ख़त्म हो जाता है, पूरी सृष्टि पूरा ब्रम्हाण्ड पूरा समाज, प्रकृति, धरती सब अपने ही लगने लगते हैं। परायेपन का भाव तिरोहित हो जाता है।

तब आँख नहीं बंद करनी पड़ती, आंखें खुली रहती हैं। योग साधना करने के लिए, ध्यान करने के लिए आँखों को बंद करने की आवश्यकता नहीं रहती है। और कोई काम भी बंद नहीं करते। सारा काम,सब कुछ, सारी लौकिक क्रियाएँ करते हुए भी योग साधना चलती रहती है। और कोई कष्ट भी, अनावश्यक कष्ट भी अपने शरीर को नहीं देते। सहज रूप से शरीर की देखभाल करते हैं और शरीर भी सहज रूप में अपनी क्रियाएं करता रहता है। अनावश्यक शरीर को कष्ट देने की आवश्यकता नहीं रहती।

खुली हुई आँखों से अंदर अंदर भाव विभोर होते हुए, हंसते–मुस्कराते हुए जो भी दिख रहा है उसको पहचानते हैं, पहचानने की कोशिश करते हैं; क्योंकि उस सबके वाह्य आवरण के अंदर/भीतर वही विराट सर्वव्यापी ईश्वर दिख रहा होता है, और उसके सुन्दर रूप को निहारते रहते हैं, मगन होते रहते हैं।

योग साधना के उन भावों और शब्दों में लगातार डूबे रहने से, लगातार अभ्यास से ही मन जाग उठता है और स्वतः ही मलिन वासनाएँ, गंदी वासनाएँ,अनावश्यक वासनाएँ ख़त्म होने लगती हैं,तिरोहित होने लगती हैं। यहाँ ध्यान देने की बात है कि सारी वासनाओं की वर्जना नहीं है; केवल मलिन वासना जो गंदी वासनाएँ हैं, जो अनावश्यक वासनाएँ हैं; जो सम्पूर्णता के एहसास के लिए, सम्पूर्णता से जुड़ाव के लिए नुक़सानदेह है उन्हीं वासनाओं का त्याग करना है।

ये योग साधना जब और सघन होती है तो यह लगातार चलती रहती है, उठते बैठते कभी छूटती नहीं है, इसकी लगन लग जाती है।यह हमारे पूरे व्यक्तित्व, जीवन और कार्य शैली को आच्छादित कर देती है।

कबीर दास कहते हैं कि यह जो उन्मन रहने की, जीवन की शैली है, अपने व्यक्तिगत मन से परे उस समष्टि के साथ जुड़ाव के एहसास के साथ रहने की शैली है उसे स्पष्ट रूप से वही समझ सकता है, वही गा सकता है, वर्णन कर सकता जो सुख और दुख दोनों के एहसास से थोड़ा ऊपर उठकर परम पद अर्थात निर्विकार और सम्पूर्णता से उपजे हुए और जुड़े हुए आनंद की अवस्था में स्थित हो गया हो, उसी आनंद में डूबा रहता हो।

एक बार पुनः अंतरराष्ट्रीय योग दिवस पर ढेर सारी बधाइयाँ और शुभकामनाएँ। जैसा कि नाम से ही विदित है यह अंतरराष्ट्रीय योग दिवस है यानि कि कम से कम हम अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तो सबसे जुड़ें, जुड़ाव महसूस करें,इस धरती पर जितने लोग हैं, देश हैं, प्रकृति, पर्यावरण, जीवोक्रेसी और इस सम्पूर्ण धरती से तो जुड़ाव महसूस करें यह यही हमारे योग की सच्ची शुरुआत होगी। बाद में हम अपने सौर मंडल, सम्पूर्ण सृष्टि पूरे ब्रह्मांड और काल/समय (time/space) से जुड़ाव महसूस कर पाएँगे।

भोजपुरी आलेख

भोजपुरी के भवभूति पं0 धरीक्षण मिश्र

सुधाकर तिवारी

पं० धरीक्षण मिसिर भोजपुरी के विलक्षण कवि रहे और बेलाग कविताएँ लिखी। उन्हें भारतीय साहित्य अकादमी की ग्रंथमाला में शामिल होने का गौरव प्राप्त है, और ऐसे शायद वे अकेले भोजपुरी कवि है। डा. वेद उनकी ग्रंथावली भी हाल ही में प्रकाशित हुई है। डा. सुधाकर तिवारी का यह लेख लोक कवि पं० धरीक्षण मिसिर को कहार की सादर श्रद्धांजलि है।

–सम्पादकीय

भोजपुरी के सिद्ध आ विलक्षण कवि पं0 धरीक्षण मिसिर के जनम सं0 1958 की चैत्र रामनवमी तद्नुसार 28 मार्च 1958 के उत्तर प्रदेश के तत्कालीन गोरखपुर जिला बाद के देवरिया आ अबहीं के कुशीनगर जिला के तमकुही विकासखण्ड के बरियारपुर गॉव में भईल रहे। मिसिर जी के पिता के नॉव श्री जगदेव मिसिर आ उनके महतारी के नॉव फूलकली देवी रहे। उनुके बाबूजी एगो किसान रहनीं। वोह समय में पढ़े–लिखे के एतना चाव ना रहे आ केहू पढ़ाई–लिखाई पर एतना ध्यान देत रहे बाकी उहॉ के बाबूजी अपने लरिका के खूब आ बढ़िया से पढ़ावल चाहत रहनीं। मिसिर जी के प्राथमिक विद्यालय के पढ़ाई तमकुही की प्राइमरी स्कूले में भईल। पड़रौना मिडिल स्कूल से उहॉ का मिडिल के माने सातवीं दर्जा के परीक्षा पास कइनीं। हाई स्कूल में पढ़े खातिर उहॉ के नॉव बनारस की लन्दन मिशन ऑव हाई स्कूल में लिखाइल आ ओही जा से उहॉ का हाईस्कूल के इम्तहान पास कईनीं।

मिसिर जी पढ़ाई–लिखाई में बड़ा तेज रहनीं। लन्दन मिशन ऑफ हाईस्कूल में उहॉ के अध्यापक मि0 डब्ल्यू डी0पी0 हिल रहनीं। हिल साहब के मिसिर जी पर पूरा प्रभाव परल। उहॉ के मन में हिल साहब जवन ज्ञान आ पढ़ाई के बदे रुचि उत्पन्न कइलें ऊ जिनिगी भरि उहॉ के साथे रहल। मिसिर जी के वियाह बिहार के पच्छिमी चम्पारन जिला के बिरती गॉव के श्री हृदयपति तिवारी जी की सुघर कन्या देवराजी देवी से भईल। मिसिर जी के

भाई के नॉव सत्यनारायण मिश्र रहे। उनुके एगो अकेले लरिका रहे तप्पा मिसिर। तप्पा मिसिर के तीनि गो लरिका कैलासनाथ मिसिर , अमरनाथ मिसिर आ दिनेश मिसिर भईलें। मिसिर जी के घर खानदान भरल पूरल परिवार रहे आ अबहिन भी भरल पूरल परिवार बाटे।

धरीक्षण मिसिर जी हाईस्कूल कईला के बाद अपने गॉवे घरे रहि के आजीवन खेतीबारी कईनीं , स्वाध्याय की बलबूते लेखन कार्य कईनीं। घरे के लोगन के मन रहे कि उहॉ का नोकरी करीं पर उहॉ का नोकरी कईल पसन्द ना कईनीं। उहॉ के विकास स्वतन्त्र चेता मनई की नाईं भइल रहे। उहॉ के एह तरे की स्वाभिमानी रहनीं कि कबो उहॉ का बस चाहे ट्रेन के सवारी ना कईनीं। अगर कबो उहॉ का बस चाहे ट्रेन के सवारी चाहे अनचाहे करे के परे तब उहॉ के साथे एगो सहायक जात रहे। उऑ का ई सोचत आ मानत रहनी कि अइसन कईला से टिकट देबे वाला की आगे हाथ फइलावे के परे ला जवन उहॉ का कबो पसन्द ना रहे। टिकट देबे वाला के हाथ ऊपर रहेला आ टिकट लेबे वाला के हाथ नीचे रहे ला। उहॉ का देबे के सीखले रहलीं लेबे के नाही सीखले रहनीं। एह बेवहार आ व्यापार के उहॉ का जीवन भर निर्वाह कइनीं। उहॉ के अपने पड़ोसी आ ओह समय के तमकुही नरेश इन्द्रजीत प्रताप बहादुर साही के बहुत आ बार–बार आग्रह कइला के बावजूद जमीन –जायदाद नाहीं मंगनीं आ मगबो कइनी त "मानस पीयूष" जवन ओतनी बेरा गीता प्रेस गोरखपुर से छपल रहे, उ मंगनी। मानस पीयूश पढ़ि के उहॉ का ओके राज ग्रन्थागार तमकुहीराज के फेरू से वापस कइ देहनी।

लमहर आ फरहर जीवन जीयत उहॉ का सत्तानबे वर्ष की उमिरि में कार्तिक कृष्ण नवमी तदनुसार 24 अक्टूबर 1997 के ठीक दुपहरिया में अपने परिजन लोगन के बीचे में अन्तिम बेर सॉस लेहनीं। अपनी मुअला की

पूर्व प्राचार्य राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय ओबरा सोनभद्र उ0प्र0 / निदेशक, भोजपुरी शोध संस्थान धौरहरा कालीबाग, फाजिलनगर कुशीनगर उ0प्र0 274401
ईमेल : tiwaridrsudhakar@gmail.com

समय उहॉ के मन मस्तिष्क पर कवनो दबाव तनाव कुछउ नाहीं रहे। उहॉ का सान्त भाव से यह असार संसार से विदा लेहनीं। ई बतिया बतावल जरूरी बा कि अपने अन्तिम विदाई से दू घण्टा पहिले उहॉ का अपने दाह संस्कार अउर श्राद्ध कर्म की बारे में अपने परिवार में सबके बता के तब विदा लेहनीं। सुनि के तनि अचरज सबके मनवा में लागी पर ई बतिया केहू से सुनल नाहीं ऑखिन के देखल हवे। अपने सरगे गईला के 20 मिनट पहिले।उहॉ का एगो कॉपी "हरे राम" लिखि के अचेत हो गईनीं। ई खाली एगो संयोगे कहल जाई कि नवमी की तिथि के आवे वाला महामानव नवमी की तिथ के ही हमनी से विदा ले लेहनीं। उहॉ के आईल आ गईल दूनू तिथिया नवमी ही बनि के रहल।

पं0 धरीक्षण मिश्र के व्यक्तित्व शान्ति, कठोर परिश्रम सादगी सहजता आ उदाहरता के जीवन रहे। सब धरमन के प्रति उहॉ की मनवा में सम्मान रहे। दूसरे खातिर जियल उहॉ का पसन्द रहे। दुखी मनई खातिर उहॉ की मनवा में अथाह करुणा आ प्रेम रहल। दीन दुखी, गरीब–गुरुबा के आगे बढ़ावे बदे उहॉ का बेचैन हो जात रहनी। कुछु करे बदे चिन्तित लउकत रहनीं। छूआछूत के उहॉ का विरोधी रहनी। प्रदर्शन, पाषण्ड, ढ़ोग उहॉ का तनिको पसन्द ना रहे। ऐसे एहॉ का कोसन दूर रहत रहनीं। सॉच कहे बदे, सॉच सुने बदे आ सॉच आचरण बदे उहॉ के मनवा में आग्रह रहे आ प्रबल आग्रह रहे। उहॉ का अपने जीवन में सायदे कबो झूठ बोलले होखबि। बाढ़ि के विभीषिका उहॉ का देखले आ भोगले रहनीं। भयंकर अग्निकाण्ड भी देखले रहनीं काहे कि जवने इलाका में उहॉ के घर बा वोह इलाका में हरदम घरवन में आगि लागे। सबके घरवा मड़इया के फूस के रहे। आगि लागे त बाग फसल खेत खरिहान घर बार सबके नुकसान होखे। वानर कुलि अनाज के फसलन के बड़ा नुकसान करें सन। एही बदे वानरन के आ गंगा के उहॉ का देव देवी चाहे माता कबो नाहीं मननीं। अपने पढाई के छह बरिस बनारस में रहला बितवला के बादो उहॉ का अपने जीवन में कबो भक्ति आ श्रद्धा भाव से गंगा में ना नहइनी। उहॉ का कबो कवनो मन्दिरो में ना गइनी। उहॉ का मन की पवित्रता पर विस्वास करत रहनीं। जबले कवनो बाती के अपने तरक की कसौटी पर ना कसि ली आ उहॉ की कसौटी पर उ खरा ना उतरे तब ले ओ पर उहॉ का कबो विस्वास ना कईनीं। मनई की मरजादा के गरिमा के उहॉ का बरोबर ध्यान राखीं आ एही कारण कबो गैर बरोबरी के ना अपने जिनिगी में समाये देहनीं आ ना सहन कईनीं।

क्वि जी सादगी के दूसरा रूप रहनीं, भाव रहनीं। एसे उहॉ के खॉटी गॉधीवादी कहल जा सकेला। उहॉ का गॉधी बाबा के अपने खुदे के जीवन में उतरले रहनीं। गॉधी बाबा के विचार खाली उहॉ के चिन्तन तक ना रहे। कम से कम में जीवन बसर कईल उहॉ की सुभाव में रहे। घरवा की लगवे उहॉ की अपने हाथे से रोपल बगइचा में फूस खर पतवार की झोपड़ी में बहुत कम सामान की साथ जेतना में काम चलि जा ओतने सामान के साथे चाहे ई कहीं कि गुजर–बसर भरि की सामाने के साथे रहल, जिनिमी बितावल उहॉ क पसन्द रहे। उहॉ के आचार–विचार खान–पान रहन–सहन सब सादा बिल्कुले सादा रहे। उहॉ का सुद्ध साकाहारी की साथे–साथे एकाहारी भी रहनीं। दूध –दही फल उहॉ के भोजन में बहुते पसन्द रहे।

गॉधी जी के छाप उहॉ के जिनिगी पर परल रहे। एही से 1930 में उहॉ का कपड़ा पहिरल त्यागि दीहनीं। उहॉ का पिस्तौल कट एके धोतिया में आधा पहिरि लीं आ आधा ओढ़ी लीं। घरवा में पढ़े वाला लरिकवन की कपियन में जवन पनवा बचि जा ओही के उपयोग उहॉ का शब्दार्थ लिखे में आ कवितव लिखे में कई लीं। ई मितव्ययिता उहॉ की जिनिगी के हिस्सा बनि गईल रहे। एहॉ का समय के बड़ा पाबन्द रहनीं। समय के सदुपयोग कइला के गुण आ कला उहॉ के भीतरा भरल रहे। एकरे साथे–साथे उहॉ का जिनिगी में कठोर अनुशासन के भी हिमायती रहनीं। उहॉ के बिहाने–बिहाने के समय अपना खुदे के पढ़ला–लिखला में बीतत रहे। उहॉ का रोजो सबेरे कम से कम चारि घण्टा के समय वाल्मीकि रामायण , अंगरेजी कविता के अनुवाद, डिस्कवरी ऑफ इण्डिया अमरकोष आ सिद्धान्त कौमुदी पढ़ला में बितावत रहनीं। इहे उहॉ के पूजा रहे। दिनवा में अपनी बगइचवा में कबे अकेल आ कबे बनिहरवन की साथे काम करे में बीते। दुपहरिया में खइला के बाद कुछ देर आराम करि के फेरू से पढ़ल आ लिखल के काम शुरू कइ देत रहनीं। सॅझिया की बेरा उहॉ का बहुते देरी तक ले पढ़ाई करीं। अन्हार भईला ले ई काम चलत रहे। अपना पढ़ाई की समय में केहू के आईल उहॉ का तनिको पसन्द ना रहे। अपनी पढ़इया की समइया में उहॉ का केहू से बतियावल पसन्द ना रहे। कबो कबो कवनो स्कूलिहा लरिका कुछू पूछे आवें सन त उहॉ का खुशी होखे आ ओ कुलिन्ह के पढ़ावे लागीं। अपने खुदे पढ़ी के उहॉ का अंगरेजी, हिन्दी, संस्कृत के पुरहर ज्ञानी बनि गइनीं।

घरीक्षण मिसिर जी के सगरो जिनिगी प्रकृति के साथे–साथे बीतल रहे। सायद उनकी लमहर उमिरिया इहो एगो कारण रहे। उहॉ का सरीर से कमजोर रहनीं दूबर पातर रहनीं बाकी मनवा से मजबूत आ स्वस्थ नीरोग रहनीं। पइऑ पइऑ चलना उनके आदत मे सुमार रहे। कवि सममेलन में , कवि गोष्ठी में कवना सभा सोसाइटी में भाग लेबे खातिर उहॉ का सत्तर साल की उमिरिया ले पइआं पइऑ चलि दीं। एहू उमिरि में उहॉ का तीस–चालीस किमीत्र ले पइऐं पइऐ घूमि आवत रहनीं। बड़ी कवनो मजबूरी होखे तबे उहॉ का बसे से भा ट्रेन से यात्रा करत रहनीं। उहॉ का सत्तनबे बरिस की उमर ले सायदे कबो बीमार परल होखबि। उहॉ के विस्वास प्रकृति आ प्राकृतिक चिकित्सा में अचूक रहे। दवाई के के प्रयोग उहॉ का सगरो उमिरि में कबो ना कईनीं। उपवास कइला में उहॉ के समानता खाली गॉधी जी से कईल हा सकेला अवरी केहू से नाहीं। सब कुछ मिला–जुला के उहॉ के जीवन एगो

तपस्वी के एगो साधक के जीवन रहे। एगो सच्चा साधू के एगो संन्यासी के जीवन रहे। एगो आदर्श गृहस्थ के जीवन रहे।

अपने विद्यार्थी जीवन से ही कविताई से उहॉ के लगाव झुकाव हो गइल रहे। बचपन में अहॉ का छोट् छोट् तुकबन्दी करे लागल रहनीं। तमकुही रियासत उहॉ के घरवा के सटले रहे।। रियासत में उहॉ के आइल–गईल रोज लागल रहे। तमकुही रियासत बड़ा समृद्ध आ सांस्कृतिक कार्यक्रम बदे सम्पन्न रियासत रहे। इहॉ सांस्कृतिक के अरथ आजुकाल्हि के स्कूलवन में होखे वाला गीत गवनई नाहीं फिल्मी गीतन के सांस्कृति कार्यक्रम नाहीं कहल जा सकेला ई उहॉ का ई मानत रहनीं। एहि रियासत के पुस्तकालय में ढ़ेर से किताबन के खानि रहे। पोथिया पढे के खातिर उहॉ का रोज रियासत तमकुहीराज ले जाईं आ सॅझिया ले घरवा लवटि आईं काहे कि ओहिजा उहॉ के पढ़े खातिर पोथी सुलभ रहलीं सन्। रियासत की पुस्तकालय में अपनी समय के प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका "सुकवि" हर महीना बिना नागा के आवत रहे। एह पत्रिका के सम्पादक कविवर गया प्रसाद सुकुल 'सनेही' जी रहनीं। धरीक्षण मिसिर जी पर गया प्रसाद सुकुल 'सनेही' जी के बड़ा प्रभाव रहे। 'सुकवि' पत्रिका में छपे खातिर उहॉ का आपन कविता भी भेजत रहनीं आ ओहमे उहॉ के कवितवा छपबो करे।

तमकुही रियासत में दू जने बड़ा प्रतिभावान रहलें। एक जने रहने राजा साहब के सचिव बाबू कोदई राय जी आ दूसरका जने के नॉव रहे कविवर उमापति द्विवेदी। उमापति द्विवेदी जी संस्कृत पाठशाला के प्रधानाध्यापक रहनीं। उहॉ का ''पारिजात हरणम्'' महाकाव्य भी लिखले रहनीं। ई दूनू मनई धरीक्षण मिसिर जी के प्रशसंक आ प्रेमी रहे लोग। मिसिर जी की काव्य–प्रतिभा के विकास में ई दूनू जने के बड़ा योगदान रहे। तमकुही रियासत सांस्कृतिक रूप से बड़हन सम्पन्न रहे। रियासत की दरबार में रोज रोज कवनो ना कवनो समारोह होखे। राजा साहब के मुँहलगा आ प्रिय कवि होखले की नाते मिसिर जी का भी अपनी कविताई सुनावे के सबकी बीच में आदर पावे के खूब समय मिले। उहॉ के यश चारों ओर फइलल लागे रहे। रियासत से सम्मान पवला से लोग उहॉ के राजकवि भी कहे पर, स्वतन्त्रचेता मिसिर जी कबो अपना के राजकवि ना लिखनी आ ना कहववनी चाहे ना मननीं।

पं0 धरीक्षण मिसिर जी की काव्य प्रतिभा के विकास धीरे–धीरे भईल। तुकबन्दी, समस्यापूर्ति आ तात्कालिक सन्दर्भों पर आशु कविताई के स्थान पर उहॉ का गम्भीर आ झकझोरे वाला कविताई लिखीं। एही तरे उहॉ की कविताई के विकास भईल। उहॉ के कविताई मुखर होखे लागल। उहॉ का जीवन जगत् से जुड़ल कविताई लिखे लगनीं। उहॉ का अपने समय के बड़ा सावधानी से आ पारखी दृष्टि से देखनीं। राजनीतिक– सामाजिक जवन–जवन बदलाव भईल ओह सबके उहॉ का मजबूती से अनुभव कईनीं ओ सबके उहॉ का गवाह रहनीं। एह बस बदलाव के उहॉ की संवेदनशील मनवा पर असर परल। इहे एगो बड़हन कारण रहे कि उहॉ के कविता समाज के भीतर पइठत चलि गईल। उहॉ के काव्यात्मक परिणिति बड़ा गहिर आ फइलल रहे। व्यंग्य उहॉ के कविता के आधार रहे, प्रकृति रहे, प्रवृत्ति रहे। राजनीति, समाज के जेतना बुराई रहे दोष रहे ओह सब पर उहॉ का आपन कलम चलवनीं। जीवन मे सच्चाई, ईमानदारी के अपनावे वाला ओह रास्ता पर चले वाला कवि मिसिर जी राजनीति आ समाज के भीतर के बुराई, दोष देखि के तिलमिला जात रहनीं। इहे कारन रहे कि उहॉ का गम्भीर आ शिष्ट व्यंग्य की ब्याज से भोजपुरी साहित्य के उत्कर्ष आ ऊँचाई देहनीं। उहॉ के रचना अतुलनीय आ स्पृहणीय बाड़ी सन्। भोजपुरी उहॉ के कविता के भाषा रहे आ व्यंग्य उहॉ के प्रसिद्ध विधा रहे। ई दूनू में उहॉ के केहू जोड़ीदार ना बा।

कविता में उहॉ का छन्द आ अलंकार के महत्व मननीं, स्वीकार कईनहीं आ एही तरे छन्दोबद्ध अलंकार युक्त रचना खातिर अपने समय के कवि लोगन के प्रेरित कईनीं। हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध महाकवि आचार्य केसव दास जी का उहॉ का घोर प्रसंसक रहनीं। सेनापति आ केसवदास जी उहॉ के प्रिय कवि रहे। उहॉ की कविताई पर ई दूनू कवि लोगन के साफ–साफ छाप आ प्रभाव लउकल बा। हिन्दी साहित्य में जेतना भी प्रचलित आ वेवहार में आवे वाला अलंकार आ छन्द बा उ सबके सब मिसिर जी अपने स्वरचित कविताई में उदाहरण देके संस्कृत की अलंकारशास्त्र के भोजपुरी में पहिला बेर पिंगलशास्त्र के परिपाटी अपनवनी। उहॉ का भोजपुरी के आचार्य हईं। अइसन अइसन अलंकारन के कुल संख्या एक सौ चालीस गो बा। एमे शब्दा आ अर्था दूनू अलंकार मिल बाड़ें। भोजपुरी में उहॉ का कुछू नयो अलंकार के विधान कईनी आ उदाहरण भी देहनीं। एही तरे उहॉ का नया अलंकार नया छन्द के प्रयोग भी कईनी।भोजपुरी में अलंकारशास्त्र के रचना करे वाला उहॉ का पहिला कवि पहिला आचार्य हईं।

छन्दन पर मिसिर जी के असाधारण आ बेजोड़ अधिकार बाटे। उनकी कविताई में संस्कृत आ हिन्दी के सगरो छन्दन के प्रयोग मिलले ला। संस्कृत के कठिन से कठिन जाने जाये वाला छन्दन के भी उहॉ का आसानी आ सुगमता से प्रयोग कईले बानीं। विद्युन्माला, वंशस्थ, शशिवन्दना, सूर, मालिनी, भुजंगप्रयात, इन्द्रवज्रा, निधि आदि छन्दन के सफलप्रयोग उहॉ का भोजपुरी में कईनीं आ क के देवनीं कि भोजपुरी में छन्दविधान से कविता लिखल जा सकेला। संस्कृत में उहॉ के पकड़ अद्भुत रहे। संस्कृत के बड़े–बड़े पण्डित लोग भी उहॉ के छन्द विधान देखि के विस्मित हो जाला लो। संस्कृत के शब्दन के आ धातु रूपन के आधार बना के उहॉ का कुछू अइसनों कविता लिखले बानीं जेके रस खाली संस्कृत के व्याकरण के विद्वानन के ही मिल सके ला चाहे संस्कृत के व्याकरणाचार्य लोगन के। संस्कृत–व्याकरण,

अलंकार–प्रयोग आ शब्द कौतुक के कारण उहॉ के कविताई कहीं –कहीं बड़ा कठिन हो गईल बा। एही से ऊ सामान्य सुने वाला चाहे सामान्य बॉचे वाला की पहुॅच से बहुत दूर हो गईल बा।

धरीक्षण मिसिर जी स्वभाव से बड़ा संकोची, स्वाभिमानी आ निस्पृह रहनीं। उहॉ का अपनी कवतवन खातिर भी बेहद लापरवाह रहनीं। कबे उहॉ का अपने कविताई के संग्रह छपवावे खातिर कवनो रुचि नाहीं देखवनीं। उहॉ की बारे में कहल जाला कि उहॉ का "पछावे से अधिका छिपावे में" विस्वास करत रहनीं। इहे कारन रहे कि उहॉ का एगो लम्बा समय ले अपने सम्पर्क में आवे वाला लोगन के बीवचे में रहि गईनीं। कवि मंचन प, कवियों की मंडली में साहित्य–समाज ले उहॉ के लमहर समय तक केहू नाही जानत रहे। ना छपला के कारन उनके कविताई व्यापक सुधी समाज तक नाहीं चहुॅप पावल रहे। उहॉ की हीरक जयन्ती पर उनके चाहे वाला पं0 सुदामा सुकुल, पं0 केदारनाथ मिसिर, डॉ0 राजकुमार पाण्डेय, श्री रामप्रसाद लाल श्रीवास्तव की सहयोग से उहॉ के पहिलका काव्यसंग्रह शिव जी के खेती 1977 में छपल रहे। बाद में डॉ0 वेदप्रकाश जी पाण्डेय के सहयोग से दूसरा संग्रह 1995 में "कागज के मदारी" छपल। उहॉ के यह असार संसार से विदा लेहला की बाद उहॉ के कुल्हि कवितवा "धरीक्षण मिश्र रचनावली" नाम से चार खण्ड में छपल। हमरे गुरु परम्परा के डॉ0 रामदेव सुकुल जी उहॉ के जिनगी पर एगो उपन्यास "कलम और कुदाल" लिखनीं जवन छपल। उहॉ की कविताई पर समय –समय पर ढेर से साहित्यिक संस्था उनके सम्मानित कईली सन्। येह कड़ी में पहिला प्रयास डॉ0 अरुणेश नीरन जी कईनी आ विश्व भोजपुरी सम्मेलन से उहॉ के "सेतु सम्मान" से 1995 में सम्मानित कइल गईल। साहित्य अकादमी नई दिल्ली से उहॉ के 1997में भाषा सम्मान भी मिलल।

मिसिर जी के प्रशंसक आ शुभेच्छु लोग मिलि के उहॉ की साधना स्थली के कवि के प्रिय बगइचा मे एगो पत्थर के मूर्ति स्थापित कईल आ उहॉ के प्रति आपन प्रेम के श्रद्धा के भाव देखावल। मिसिर जी की जन्मतिथि पर हर साल रामनवी के दिने एगो विशिष्ट साहित्यिक कार्यक्रम आयोजित होखे ला। ई कार्यक्रम 1993 से हर साल होला। ई भाव, ई क्रम आजुओ 2025 तक ले चलि आवत बा। ई सब कार्यक्रम श्रद्धा भाव स्वतःस्फूर्त प्रेरणा आ जन सहयोग से बिना नागा के चलि आवत बाटे। भोजपुरी के पहिलका आचार्य धरीक्षण मिसिर जी के साहित्य यात्रा में भोजपुरी अंचल के समूचा संस्कृति उद्भाषित बाटे। पूर्वी उत्तर प्रदेश के तमकुहीराज कुशीनगर क्षेत्र के बरियारपुर के धरती पर जनम लेबे वाला धरीक्षण मिसिर आजु कवनो परिचय के मोहताज नईखन। धरीक्षण मिसिर लोकभाषा भोजपुरी के महान् साहित्यकार रहनीं। व्यंग्य उहॉ के प्रकृत विधा रहे। काव्य में उहॉ का रस, छन्द, अलंकार के आग्रही रहनीं। उनुकी कविताई में अलंकार अउर छन्दन के पसराव उनके सामर्थ्य आ गौरव के बाति हवे। संस्कृत के प्राचीन आचार्य लोगन की तरे काव्यशास्त्र की मर्यादा में रहि के काव्य रचना के उहॉ का साधक रहनीं। भोजपुरी जइसन लोकभाषा में उहॉ का संस्कृत के कठिन से कठिन आ अरुझाइल मानल जाये वाला छन्दन शिखरिणी और अमृत ध्वनि के सार्थक आ सफल प्रयोग अपनी भोजपुरी कविताई कईनीं। इहे कारन बा कि बहुमुखी प्रतिभा के धनी येह कवि के भोजपुरी साहित्य जगत् में शीर्ष स्थान मिलल।येही नाते मिसिर जी जइसन प्रसिद्ध कवि के भोजपुरी के कबीर कहि के लोग सम्मानित करे ला। वइसे उहॉ का सामाजिक जीवन के विद्रूपता के वर्णन अपनी कविताई में अधिक कइले बानी। उहॉ का समाज के हर वर्म श्रेणी धर्म आदि पर आपन लेखनी चलवले बानी लेकिन "कबना दुखे डोली में रोवत जाली कनिया"' ओतनी बेरा की समाज के कुरीति, अव्यवस्था पर लिखल महाकाव्यात्मक पृष्ठभूमि के गीति में संवेदना औा हृदय के मर्म के छूवे वाला, भाव में डूबे वाला अविस्मरणीय गीति बनि गईल। उहॉ का साबित कइनीं कि खाली महाकाव्व लिखि के केहू महाकवि ना बनि सकेला बिना महाकाव्य लिखले भी महाकवि कहावल बनल जा सकेला। महाकवि बने कहावे खातिर महाकाव्य लिखल कवनो जरूरी नईखे एगो भावप्रवण, मर्मस्पर्शी संवेदषील कविता लिखि के भी महाकवि बनल आ कहावल जा सकेला। धरीक्षण मिसिर जी सामने वाला खड़ा आदमी के महानता के ओकरे पद गरिमा के व्यक्तित्व के कवनो चिन्ता कइला बगैर बेधक आपन कविता आपन बाति सुनावे में कवनो कबो संकोच नाहीं कईनीं। उहॉ का भिखारी ठाकुर की परम्परा के आगे बढ़ावे के काम कईनीं। उहें की एगो कविता के दो पंक्ति के साथे इम आपन बाति पूरा कईल चाहबि जवना में उहॉ का अपने घर–ऑगन, बाग–बगइचा क्षेत–खरिहान के उकेरले बानीं –

लोकतन्त्र के मानी ई बा लोकि लोकि के खाईं जिन,

गिरला के आसा करिहें हाथ मलत पछताई ए भाई

अइसन राज ना आई ए भाई अइसन राज ना आई।

व्यक्तित्व

सफलता की कहानी किसान की जुबानी

*पार्थ प्रतीक[1] एवं रुद्र प्रताप सिंह[2]**

वंश गोपाल सिंह एक ऐसे प्रगतिशील किसान हैं, जिन्होंने सब्जियों की उन्नत किस्मों का उत्पादन, विपणन और एकीकृत कृषि प्रणाली को अपनाकर कृषि क्षेत्र में एक नया आयाम हासिल किया है। वंश गोपाल सिंह आजमगढ़ जिले के विकासखंड अजमतगढ़ के ग्राम कोठा निवासी स्व. शिवनाथ सिंह के पुत्र हैं। वंश गोपाल सिंह का जन्म 2 फरवरी 1966 को हुआ था। इन्होंने बीएचयू जैसे प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय से कृषि में परास्नातक की डिग्री प्राप्त की और एक सफल उद्यमी बनने की दिशा में कदम बढ़ाए।

इन्होंने शुरुवात अपने गाँव कोठा में आधे एकड़ भूमि पर सब्जियों की उन्नत किस्मों का उत्पादन और विपणन करने से किया। ये नियमित रूप से विभिन्न प्रतिष्ठित संस्थानों और विश्वविद्यालयों, जैसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली, भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान (आईआईवीआर) वाराणसी, बीएचयू वाराणसी, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय अयोध्या, कृषि विज्ञान केंद्र आजमगढ़, इत्यादि जगहों पर जाकर नवीनतम ज्ञान हासिल करते रहें और उसे अपने उद्यम में लागू करते रहते हैं, जिससे वे अपने व्यवसाय को निरंतर बढ़ा रहे हैं। धीरे–धीरे अपने उद्यम को बढ़ाते हुए, अब 15 एकड़ से अधिक भूमि पर एकीकृत कृषि प्रणाली, जिसमे धान, गेहूं, दलहन, तिलहन, बागवानी, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन, वर्मी कम्पोस्ट इत्यादि का उत्पादन कर रहे हैं तथा करोड़ों का मुनाफा कमा रहे हैं। इनके नवाचार से प्रभावित हो कर जिले तथा जिले के बाहर के हजारों किसान जुड़ कर नई कृषि तकनीकी के बारे मे ज्ञान प्राप्त कर रहे है तथा नये उद्यम स्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं।

वर्तमान में, इन्होंने खुद को एक उद्यमी से कहीं अधिक साबित किया है। उद्यमिता के साथ–साथ रोजगार के अवसर प्रदान कर समाज सेवा का भी कार्य कर रहे हैं। इनके इस सफलता से प्रभावित होकर विभिन्न प्रतिष्ठित कृषि वैज्ञानिकों द्वारा उनके फार्म का

नाम– श्री. वंश गोपाल सिंह
पता– ग्राम–कोठा, वि.ख. अजमतगढ़
जनपद–आजमगढ़
मो. : +91 9415276605

निरीक्षण समय–समय पर किया जाता है। वंश गोपाल सिंह जी को विभिन्न प्रतिष्ठित पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया है।

निम्नलिखित तालिकाएं वंश गोपाल सिंह जैसे बहुत ही प्रगतिशील और संभावनाशील किसान द्वारा अर्जित कुल आय और शुद्ध लाभ के स्तर को दर्शाती हैं।

विवरण	कुल आय (रु०/हे०)	शुद्ध आय (रु०/हे०)
फसलें	2,37,290	1,52,550
बागवानी	13,85,000	8,50,000
पशुपालन	1,40,000 / वर्ष	50,000 / वर्ष
मत्स्य पालन	1,55,000 / वर्ष	98,000 / वर्ष
मधुमक्खी पालन	1,40,000 / वर्ष	88,000 / वर्ष
वर्मीकम्पोस्ट / त्वरित कम्पोस्ट	2,15,000 / वर्ष	1,70,000 / वर्ष
योग	22,72,290	14,08,550

[1]रिसर्च स्कालर (टी०डी०पी०जी० कॉलेज,जौनपुर (उ०प्र०)
[2]सह प्राध्यापक, कीट विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ०प्र०)–224 229
ईमेल : rudrapsingh.doe@gmail.com

प्रमुख उपलब्धि

- श्री बंश गोपाल सिंह ने एकीकृत कृषि प्रणाली अपनाते हुए वाणिज्यिक स्तर पर गुणवत्तायुक्त नर्सरी उत्पादन एवं बिक्री से रोजगार व आय प्राप्त कर रहे हैं तथा साथ में कृषि उद्यमिता को भी बढ़ावा दे रहे हैं।
- श्री सिंह के फार्म पर सरकारी एवं गैर सरकारी बैठक, बच्चों की पार्टी, प्रश्नोत्तरी, पोस्टर शो, वाद विवाद एवं पेंटिंग प्रतियोगिता, प्लांट शो आदि का आयोजन भी होता रहता है जो कृषि में पर्यटन की असीम संभावनाओं को दर्शाता है।
- कोविड महामारी के दौरान भी श्री सिंह ने अपने यूटिलिटी वैन की सहायता से आस पास के जिलों के अलावा बिहार, उत्तराखंड, झारखंड आदि राज्यों में तथा नेपाल में सब्जी पौध की बिक्री से लगभग 12.5 लाख रुपये कमाए।
- तकनीकी, योजनाओं एवं गुणवत्ता युक्त रोपण सामग्री व अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों को किसानों को उपलब्ध कराने के लिए एकल खिड़की वाले संसाधन केंद्र का विकास किया है तथा अपने व्यवसाय में 1.0 करोड़ से अधिक का टर्न ओवर कर रहे हैं।
- जैविक सब्जियों का उत्पादन करके वाट्स एप ग्रुप के माध्यम से शहर के लोगों को प्रतिदिन रसायन मुक्त सब्जी उपलब्ध करा रहे।
- अब तक हजारों लोगों को प्रशिक्षित कर स्वरोजगार को बढ़ावा दिया है जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार व आय में वृद्धि हुई।

सम्मान / पुरस्कार

- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा आयोजित किसान मेले मे मा० केंद्रीय कृषि मंत्री, भारत सरकार द्वारा फार्मर्स फेलो अवार्ड 2023 ।
- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा आयोजित किसान मेले मे मा० केंद्रीय कृषि राज्य मंत्री, भारत सरकार द्वारा नवोन्मेषी कृषक पुरस्कार 2021 (पूरे देश से 35 किसानों का चयन)।
- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद–राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्यगिकी संस्थान, नई दिल्ली द्वारा कृषक मित्र सम्मान 2019।
- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद–राष्ट्रीय कृषि उपयोगी सूक्ष्मजीव ब्यूरो, कुशमौर, मऊ द्वारा वर्ष 2018 में सूक्ष्मजीव तकनीकी अपना कर व्यापक प्रचार प्रसार करने हेतु प्रशस्ति पत्र।
- राष्ट्रीय कृषि विस्तार प्रबंध संस्थान (मैनेज), हैदराबाद द्वारा उत्कृष्ट कार्य हेतु कृषि उद्यमी पुरस्कार 2017।
- आज़मगढ़ महोत्सव में तकनीकी क्रिया–कलापों को सूचनाप्रद व उत्कृष्ट तरीके से प्रदर्शित करने हेतु प्रशस्ति पत्र।
- केवीके के वैज्ञानिक सलाहकार समिति के सदस्य।
- प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की सहायता से डाक्यूमेंट्री फिल्म, सफलता की कहानी, नवोन्मेषी तकनीकी की जानकारी आदि प्रसारित की गई।

हरियाणवी रागिनी

म्हारी सेहत

रणवीर सिंह दहिया

बिना रूजगार पैसा मिलै ना, बिना पीस्से या दाल गलै ना
बिना दाल सेहत बणै नौ, इन बिन पूरा इलाज नहीं ।।
हमारे शरीर को चाहिये खाणा साफ पाणी और हवा
इनके बिना सेहत बणै ना कितनी ए खाल्यो चाहे दवा
प्रदूषण कौण फैलावै देखो, ये साधन कौण घटावै देखो
जिम्मै गरीबां के लावै देखो, क्यों उठै म्हारी आवाज नहीं ।।
आदमी के रहने के लिए यो हवादार मकान चाहिये
दिमाग की सेहत की तांहि समाज मैं ना तनाव चाहिये
प्रबन्ध हो डॉक्टर दवाई का, पूरा माहौल साथ सफाई का
आदमी की सेहत सवाई का, दुनिया कहती है राज यही ।।
बीमारी के कारण के के हों जो इनकी हमनै टोह कोण्या
म्हारी सेहत ना ठीक हो जो म्हारा इसमैं मोह कोण्या
लोगां की सही भागीदारी बिना, असली नीति सरकारी बिना
विकास मैं हिस्सेदारी बिना, स्वास्थ्य रहवै समाज नहीं ।।
अपनी सेहत योजना जिब शहर और गाम बणावैं रै
ग्राम सभा मिल बैठ कै सही अपणे सुझाव बतावैं रै
फेर बदलैगी तस्वीर या, देस की बणैगी तहरीर या
लिखै सही बात रणबीर या, फेर चिड़िया नै खा बाज नहीं ।।

पी–27, इन्द्रप्रस्थ कालोनी, सोनीपत रोड, रोहतक–124001
ईमेल : dahiyars@rediffmail.com

चित्रकला (भोजपुरी) समकक्ष समीक्षित

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला क सौन्दर्य आ नया–नया जतन

वंदना श्रीवास्तव

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के सौन्दर्य भोजपुरी क्षेत्र के सांस्कृतिक धरोहर के एगो अमूल्य रत्न ह। हम जब दिल्ली सरकार के साहित्य कला परिषद के सदस्य रहनी तब आ ओकरा से बहुत पहिलहीं से येह कला खातिर मनोजोग आ उत्जोग कर रहल बानी। भोजपुरी कला–परंपरा भोजपुरी समाज के लोकसंस्कृति, सांस्कृतिकता आ दैनिक जीवन के चित्रित करे के माध्यम रहल बा। भित्ति–चित्रकला खास करके ग्रामीण इलाकन में, घरन के दीवार, चौपाल आ धार्मिक स्थलों पर उकेरल जाला। ई कला ना सिर्फ देखे में सुंदर लागेला बल्किन एकरा में समाज के जीयल–जागल परंपरा, रीति–रिवाज आ लोकजीवन के गहराई से समझे के अवसर मिलेला।

भोजपुरी क्षेत्र में भित्ति–चित्रकला के परंपरा प्राचीन काल से चलत आइल बा। खास करके पूजा–पाठ, तीज–त्योहार, आ बड़का धार्मिक अनुष्ठान के अवसर पर घर के दीवार आ फर्श सजावल जात रहल बा। एहि चित्रकला में प्राकृतिक रंग आ देसी सामग्री के इस्तेमाल होखेला, जेकरा से ई पर्यावरण के संग मेल खाए वाला बनावटी कला बन जाला। माटी, चूना, गोबर, आ फूल–पत्ता के इस्तेमाल से रंग बनावल जाला, जेकरा से घर के दीवारन पर तरह–तरह के आकृति उकेरल जाला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला में देवी–देवता, लोकगाथा आ धार्मिक कथा के मुख्य विषय के रूप में चित्रित कइल जाला। उदाहरण के तौर पर, भगवान राम, श्रीकृष्ण, माता सीता आ देवी दुर्गा के चित्र भोजपुरी भित्ति–चित्रकला में खासे देखल जाला। एही के साथ–साथ, गांव के जीवन आ सांस्कृतिक परंपरा, जैसे खेती–बारी, बियाह–शादी आ मेला–ठेला के दृश्यो ए चित्रकला में शामिल कइल जाला। एह चित्रकला में भोजपुरिया लोकजीवन के विविधता आ सुंदरता साफ–साफ झलकेला।

एह कला के सौंदर्य खाली ओकरे रंग–रूप में नइखे, बलुक ई कला भोजपुरी समाज के सामूहिकता आ रचनात्मकता के भी प्रतीक बा। जइसे कि, गांव में भित्ति–चित्रकला बनावे के काम आमतौर पर समूह में कइल जाला। मेहरारू आ बच्चा लोग एक साथ मिलके चित्र बनावे में हिस्सा लेला। ई ना खाली कला के विकास के माध्यम बा, बल्किन सामूहिकता आ मेलजोल के भावनो के मजबूत करे वाला प्रक्रिया बा।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के विशिष्टता ओकरा डिजाइन आ पैटर्न में बा। ई चित्रकला में साधारण ज्यामितीय आकृति, फूल–पत्ती, जानवर आ मानव–आकृति के इस्तेमाल होखेला। ई सब चीज आपस में मिलके एगो अद्भुत सौंदर्य रचेला। एकर रंगीनता, विविधता आ जीवन के प्रतीकात्मकता दर्शक के मन मोह लेला।

हालांकि, आधुनिकता के प्रभाव आ शहरीकरण के चलते ई परंपरा अब कमजोर पड़त जा रहल बा। नया पीढ़ी के लोग एहन परंपरा से दूर होत बा आ ई कला धीरे–धीरे विलुप्त होखे के कगार पर बा। बाकिर आजो भोजपुरिया समाज के कुछ हिस्सा, खास करके गांव में, एह परंपरा के जीवित राखे में लागल बा। ई जरूरी बा कि भोजपुरिया भित्ति–चित्रकला के बचावे आ बढ़ावे के प्रयास होखे।

आज के समय में, भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के संरक्षित करे खातिर कुछ कदम उठावल जा सकेला। उदाहरण के रूप में, विद्यालय आ कॉलेज में कला से जुड़ल पाठ्यक्रम

देवलास, मऊ (उत्तर प्रदेश)
ईमेल : vandanasrivasta70@gmail.com

में भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के शामिल कइल जा सकेला। साथे, सरकार आ गैर–सरकारी संगठन के भी चाहीं कि ई कला के प्रोत्साहन देवे खातिर अभियान चलावल जाव। एकरा अलावे, डिजिटल प्लेटफॉर्म आ सोशल मीडिया के माध्यम से भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के प्रचार–प्रसार कइल जा सकेला, ताकि लोग एकरा बारे में जाने आ समझे।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला ना खाली एगो कला रूप ह, बलुक ई भोजपुरिया समाज के जीयल–जागल इतिहास ह। एह कला में भोजपुरिया लोग के मेहनत, रचनात्मकता आ संस्कृति के अद्भुत झलक देखे के मिलेला। एकर रंग आ आकृति भोजपुरिया लोकजीवन के सादगी आ सुंदरता के बखूबी चित्रित करत बा। एह कला के बचावे आ बढ़ावे खातिर हमनी के सामूहिक प्रयास करे के जरूरत बा, ताकि ई अनमोल धरोहर आवे वाली पीढ़ियो के प्रेरणा दे सके।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला केवल दीवार पर बनल चित्र ना ह, बलुक ई भोजपुरिया समाज के आत्मा के रंगीन अभिव्यक्ति ह। एह कला के सौंदर्य के समझल आ एकरा से प्रेरणा लेके भोजपुरिया समाज के विकास आ सांस्कृतिक संरक्षण में भूमिका निभावल हमनी सबके जिम्मेदारी बा।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के सौंदर्य भोजपुरिया समाज के सांस्कृतिक, धार्मिक आ सामाजिक जीवन के गहराई तक ले जाले। ई सिर्फ चित्रकारी ना ह, बलुक भोजपुरी के आत्मा, ओकरा लोग के सोच–विचार, विश्वास आ आस्था के रंगीन झलक ह। भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के इतिहास बहुत पुरान बा आ एकर जड़ भारतीय संस्कृति के प्राचीन परंपरन में गहराई से बन्हाइल बा। एह कला के सौंदर्य में केवल रंग आ रेखा के आकर्षण नइखे, बल्किन एह में भोजपुरिया लोकजीवन के सजीवता आ सरलता झलकत बा।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के एक खास बात ई बा कि ई समाज के हर वर्ग आ हर क्षेत्र के आपन प्रतिनिधित्व देला। चाहे किसान के खेत के मेहनत होखे या मेहरारुन के आंगन में चउका–पुराइल , पशु पच्छी , सूरज–चनरमा , अकास, वायु , जल आदि : हर प्रसंग आ चित्र भोजपुरी के लोकसंवेदन के अभिव्यक्ति ह। ई कला– परंपरा खास करके गांव के घर–घर में जीवित बा। आंगन के दीवार, घर के कोना आ त्योहारन के अवसर पर अंगना , दुवार , देवाल सजावे के परंपरा आजो भोजपुरिया समाज के एक महत्त्वपूरन हिस्सा बा।

एह भित्ति–चित्रकला में प्राकृतिक सामग्री के इस्तेमाल होल। माटी, गोबर आ चूना से दीवार तैयार कइल जाला आ ओकरा बाद लोकल सामग्री, जैसे हल्दी, नीम के पत्ता आ फूल से रंग बनावल जाला। रंग चाहे सीमित होखे लेकिन एकर प्रभाव गहिर आ अर्थपूर्ण होला। ई रंग भोजपुरिया लोकजीवन के सादगी आ प्राकृतिक सौंदर्य के प्रतीक ह। अब येह कला के बढ़ावे खाती पारम्परिक रंग के अलावा पेन्सिल, पेन, वाटर कलर, एक्रेलिक कलर, कोस्टल कलर आदि के इस्तेमाल कइल जायल चाहीं। काहे से कि भोजपुरी कला के बनावल आ बचावल जरूरी ह। त्योहार, दुवार, अंगना ले एके सीमित ना रख के कागज, कपड़ा, लकड़ी, पत्थर आदि पर प्रयोग करे कें चाहीं ताकि भोजपुरी कला बेर–बेर नजर में आवे।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला में जवन आकृतियन बनावल जाली स, ऊ सब लोककला, धर्म आ रीति–रिवाज के सजीव चित्रण होली। उदाहरण के तौर पर, भगवान राम के अयोध्या वापसी, श्रीकृष्ण के रासलीला या ग्रामीण जीवन के रोजमर्रा के दृश्य, जइसे चरखा चलावत मेहरारू या खेत में काम करत किसानकृसबकुछ ई चित्रकला में जीवंत लागेला। एकरा अलावा, भोजपुरिया पर्व–त्योहार, जइसे छठ पूजा, होली, दिया देवारी, नाग पंचमी आ वियाह–शादी के अवसर पर बनल चित्र एकर विशेषता बढ़ावेला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला ना केवल धार्मिक आ सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के माध्यम बा बल्कि ई समाज के इतिहास के भी झलके। एकरा में भोजपुरिया समाज के संघर्ष, जइसे प्राकृतिक आपदा के सामना, पलायन के पीड़ा आ सामाजिक असमानता के भावो शामिल बा। हर आकृति आ हर रंग एह भावनन के गहराई से चित्रित करेला।

आज के समय में, जब आधुनिकता आ शहरीकरण तेजी से बढ़ रहल बा, भोजपुरी भित्ति–चित्रकला पर एकर असर देखल जा रहल बा। एकरा पुरान स्वरूप के बचावल आ संजोवल एक चुनौती बन गइल बा। नयका पीढ़ी, जवन अब शहर आ आधुनिकता के ओर बढ़ रहल बा, ऊ एकरा परंपरा से दूर होत जा रहल बा। एही से ई जरूरी बा कि भोजपुरिया समाज आ सरकार मिलके एह कला के बचावे आ एकरा में नयापन लावे के प्रयास करे।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के प्रचार–प्रसार खातिर विद्यालय आ कॉलेज में एकरा पाठ्यक्रम में शामिल कइल जा सकेला। साथे, भोजपुरी भित्ति–चित्रकला पर आधारित प्रतियोगिता आयोजित कइल जा

सकेला, ताकि बच्चा आ युवा एकरा बारे में जाने आ एकर महत्व समझे। डिजिटल प्लेटफॉर्म, सोशल मीडिया आ ऑनलाइन सामग्री के माध्यम से भी एकरा के बढ़ावा दिहल जा सकेला।

आज के समय में, भोजपुरिया कलाकारन के चाहीं कि ई परंपरागत कला के नया रूप देवे। आधुनिक आकृति आ विषय के जोड़ के साथ, पारंपरिक रंग आ शैली के मेल से भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के वैश्विक मंच पर पहुंचावल जा सकेला। जइसे आधुनिक गैलरी, आर्ट एग्जीबिशन, आ फिल्म आ डिजिटल मीडिया के माध्यम से एकरा के दुनिया के समक्ष प्रस्तुत कइल जा सकेला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला केवल दीवार पर बनल चित्र नइखे, बलुक ई भोजपुरिया संस्कृति के सजीव दस्तावेज बा। ई कला भोजपुरिया समाज के सादगी, रचनात्मकता आ सामूहिकता के प्रतीक ह। एह कला के जियावल, एकरा में नयापन लावल आ एकरा के राष्ट्रीय आ अंतरराष्ट्रीय पहचान दिहल भोजपुरी समाज के सांस्कृतिक जिम्मेदारी ह।

एह कला के सौंदर्य ओकरा में छुपल समाज के भावना, संघर्ष आ संवेदनशीलता में बा। हर आकृति, हर रंग आ हर रेखा भोजपुरिया समाज के आत्मा के झलके। एह खातिर ई जरूरी बा कि भोजपुरिया समाज एह कला के संरक्षण आ संवर्धन के दिशा में लगातार प्रयासरत रहे। जब भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के सही मायने में समझल आ अपनावल जाई, त ई ना केवल भोजपुरी क्षेत्र, बलुक पूरा देश आ दुनिया के गर्व के विषय बने।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के सौंदर्य केवल ओकर देखे में ना, बलुक ओकरा में छुपल संदेश में बा। ई कला भोजपुरिया समाज के सांस्कृतिक धरोहर ह, जेकरा के जिंदा राखे आ आगू बढ़ावे खातिर हर भोजपुरिया के प्रयास करे के जरूरत बा।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के सबसे खास बात ई बा कि ई समाज के परंपरा आ विश्वास के साथ गहराई से जुड़ल बा। एह कला में देवी–देवता, लोककथा आ रोजमर्रा के जीवन के दृश्य उकेरल जाला। छठ पूजा, होली आ बियाह–शादी के अवसर पर बनल भित्तिचित्र भोजपुरिया संस्कृति के जीवंत रूप के प्रस्तुत करेला। एकर रंग आ रेखा लोककला के गहराई आ सुंदरता के उजागर करेला।

भित्ति–चित्रकला में रंग बनावे खातिर प्राकृतिक सामग्री के इस्तेमाल होला। माटी, गोबर, चूना, हरदी आ अन्य देसी सामग्री से रंग तैयार कइल जाला। ई प्रक्रिया ना केवल कला के प्राकृतिक बनावेला, बल्कि पर्यावरण के संग भी मेल–जोल बनाके राखेला। रंग चाहे सीमित होखे, लेकिन एकर प्रभाव गहरा आ अर्थपूर्ण होला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला ना केवल धार्मिक आ सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के माध्यम ह, बल्कि ई भोजपुरी समाज के सामूहिकता के भी प्रतीक ह। भित्ति–चित्र बनावे में पूरा परिवार आ गांव के लोग सामूहिक रूप से हिस्सा लेला। महिलाएं, बच्चा, आ युवा लोग मिलके ई चित्र बनावे में मदद करेला। एह सामूहिकता के कारण ई कला भोजपुरिया समाज के सामूहिक भावना के उजागर करेला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के महत्व केवल ओकर ऐतिहासिक आ सांस्कृतिक मूल्य में नइखे बल्कि ई भोजपुरिया समाज के जीवन–शैली, संघर्ष आ परंपरो के प्रतीक ह। ई कला में भोजपुरिया लोकजीवन के सादगी, मेहनत आ प्राकृतिकता झलकेला।

आज के समय में, आधुनिकता आ शहरीकरण के कारण भोजपुरी भित्ति–चित्रकला खतरा में पड़ल बा। नयका पीढ़ी के लोग एकरा परंपरा से दूर होत जा रहल बा। एह स्थिति में, ई जरूरी बा कि भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के बचावे आ बढ़ावे खातिर प्रयास कइल जाव। सरकार, समाज आ गैर–सरकारी संगठन मिलके एह कला के संरक्षण आ प्रचार–प्रसार करे के काम कर सकेलें।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के प्रोत्साहन खातिर विद्यालय आ कॉलेज में एकरा पर पाठ्यक्रम तैयार कइल जा सकेला। प्रतियोगिता आ कार्यशाला के माध्यम से युवा पीढ़ी के एकर महत्व समझावल जा सकेला। साथे, डिजिटल माध्यम, सोशल मीडिया आ ऑनलाइन मंच के उपयोग से एकरा प्रचार–प्रसार कइल जा सकेला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के आधुनिक संदर्भ में नया आयाम देवे खातिर एकरा में परंपरा आ नवाचार के मेल कइल जा सकेला। पारंपरिक आकृति आ शैली के आधुनिक डिजाइन आ विषय के साथ जोड़ के एकरा के विश्वस्तर पर पहुंचावल जा सकेला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला भोजपुरिया समाज के सांस्कृतिक धरोहर ह। ई कला ना केवल भोजपुरिया लोकजीवन के सुंदरता आ सादगी के प्रतिबिंबित करेला बल्किन ई समाज के सामूहिकता आ रचनात्मकतो के प्रतीक ह। एह कला के संरक्षण, संवर्धन आ प्रचार–प्रसार भोजपुरिया समाज के सांस्कृतिक दायित्व बा।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला भोजपुरिया समाज के आत्मा के अभिव्यक्ति ह। ई कला भोजपुरिया जीवन के सजीव दस्तावेज ह, जेकरा में समाज के सादगी, सुंदरता आ संघर्ष झलकेला। एह कला के जिंदा राखे खातिर हमनी के प्रयासरत रहल जरूरी बा ताकि ई अनमोल धरोहर आगे आने वाली पीढ़ी खातिर प्रेरणा बन सके।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के संदर्भ में नयी तकनीक आ नयी दृष्टि के समावेश एगो महत्वपूर्ण पहलू बा, जवन ई परंपरागत कला के नवजीवन दे सकेला। आज के समय में, जब डिजिटल युग आ वैश्वीकरण भोजपुरी संस्कृति पर प्रभाव डाल रहल बा, एह कला के न केवल बचावे के जरूरत बा बल्किन एकरा में आधुनिकता आ नवाचार के जोड़ के एकरा के नया पहचान दिहल जा सकेला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला में नयी तकनीक के उपयोग के शुरुआत

डिजिटल आ टेक्नोलॉजी आधारित प्लेटफॉर्म से हो सकेला। ई प्लेटफॉर्म न केवल एकर संरक्षण खातिर मददगार हो सकेला बल्किन एकरा प्रचार–प्रसार के दायरा भी बढ़ा सकेला। उदाहरण के तौर पर, डिजिटल आर्ट टूल्स, जैसे टैबलेट, ग्राफिक सॉफ्टवेयर आ थ्री–डी मॉडलिंग के माध्यम से पारंपरिक आकृति आ डिजाइन के डिजिटल रूप में सुरक्षित कइल जा सकेला।

नयी दृष्टि के हिसाब से, भित्ति–चित्रकला में विषय–वस्तु के विस्तार कइल जा सकेला। पारंपरिक धार्मिक आ सांस्कृतिक आकृतियन के अलावा, समकालीन विषय, जइसे पर्यावरण संरक्षण, महिला सशक्तीकरण, शिक्षा आ ग्रामीण विकास पर आधारित चित्र बनावल जा सकेला। ई चित्र न केवल कला के आधुनिक रूप प्रस्तुत करिहें, बल्किन समाज में सकारात्मक संदेश देवे के माध्यम बन सकेला।

एकर अलावा, तकनीकी दृष्टिकोण से ई जरूरी बा कि भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के वैश्विक मंच पर ले जाए के चाहीं। उदाहरण के तौर पर, भित्ति–चित्रकला के डिजिटल प्रदर्शनी आयोजित कइल जा सकेला, जहां लोग वर्चुअल माध्यम से भोजपुरिया कला के अनुभव कर सके। ई माध्यम नया पीढ़ी आ अंतरराष्ट्रीय दर्शक वर्ग के बीच एकर लोकप्रियता बढ़ावे में मददगार हो सकेला।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के नया दृष्टिकोण में शिक्षा आ शोध के महत्व के अनदेखी नइखे कइल जा सकत। विद्यालय आ विश्वविद्यालय के स्तर पर एकरा पर शोध आ अध्ययन के बढ़ावा दिहल जाव। कला विद्यार्थी आ शोधकर्ता लोग के प्रेरित कइल जाव कि ऊ परंपरागत शैली आ आधुनिक तकनीक के समावेश से नयका–नयका डिजाइन तैयार करे।

भित्ति–चित्रकला के आर्थिक रूप से मजबूत करे खातिर एकरा व्यावसायिक उपयोग के बढ़ावा दिहल जा सकेला। उदाहरण के तौर पर, भित्ति–चित्रकला आधारित उत्पाद, जैसे कपड़ा, साज–सज्जा के सामान आ गहना डिज़ाइन कइल जा सकेला। ई ना केवल कला के नया आयाम देवे, बल्कि कलाकारन के रोजगार के अवसर भी बढ़ाई।

भोजपुरी भित्ति–चित्रकला के नयी तकनीक आ नयी दृष्टि के साथ जोड़ला से ना खाली ई परंपरागत कला जीवित रह सकेले बल्किन ई भोजपुरी समाज के सांस्कृतिक पहचान के वैश्विक मंच पर मजबूती दे सकेले। नयी तकनीक के उपयोग आ नवाचार के समावेश से ई कला भोजपुरी संस्कृति के गौरव बढ़ावे के साथ–साथ समाज आ पर्यावरण पर सकारात्मक प्रभाव डाले के माध्यम बन सकेला।

भोजपुरी कविता

भोजपुरी लोग

राणा प्रताप सिंह

भेष कई गो भाषा एक
बोली मीठा बात अनेक

जेने जाए धाक जमावे
भोजपुरिया के भाव ह नेक

मारिशस,फीजी सूरीनाम ले
झण्डा गाड़े एक से एक
देश बनावे देश बचावे
खून पसीना खूब बहावे

लोगन के एकजुट करावे
ले अंगड़ाई उठे विवेक ।

सेक्टर–II, उद्यान–II
एल्डिको, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025
ईमेल : dr.ranapratap59@gmail.com

Environment

Peer Reviewed

Sustainable Solutions for Global Land Degradation: Natural Farming Perspectives

*Riha Kumari[1], Shubham Abhishek[1,2], Bhanu Pandey[1]**

Abstract

This paper demonstrates the global land degradation, impacting 40% of the population due to human activities and climate change. Unsustainable agriculture annually depletes 24 billion tons of fertile soil, heightening climate change. The study highlights consequences, disproportionately affecting 3.2 billion people, especially rural communities and smallholder farmers. With the projected global population at 9.7 billion by 2050, the demand for agricultural products strains already pressured land resources. Land degradation varies globally due to factors like unsustainable agriculture, deforestation, and climate change. In India, where 27.77% of land faced degradation in 2015-16, natural farming emerges as a sustainable solution, addressing soil health, biodiversity, and long-term food security. Climate change worsens challenges, causing crop failures, particularly in developing countries like India, impacting overall agricultural output. The overuse of chemical fertilizers significantly contributes to soil degradation. Natural farming is presented as a resilient alternative, emphasizing regenerative methods, reduced environmental impact, and climate resilience. Techniques like cover cropping, no-till farming, and reduced pesticide use positively impact soil structure and fertility. Economic benefits of natural farming, such as healthier soils, improved water cycles, and reduced pollution and operational costs, are highlighted. Initiatives in India, like the Network Project on Organic Farming and Zero Budget Natural Farming, promote income doubling and environmental benefits. Case studies showcase successful implementations, encouraging widespread adoption, supported by government initiatives and organizations like NITI Aayog. The transformative potential of natural farming is underscored, offering a sustainable and equitable future for global agriculture amidst challenges posed by land degradation, climate change, and chemical fertilizers.

Introduction

Earth's vital land, crucial for human survival, deteriorates due to human activities and exacerbated by climate change. Lambin et al. (2013) and Willemen et al. (2020) stress severe impacts, jeopardizing 40% of the global population's living conditions and forecasting a 10% cut in global economic output. Yengoh et al. (2016) reveal 24% land degradation from 1981 to 2003, with unsustainable agricultural practices annually losing 24 billion tons of fertile soil, contributing significantly to climate change (Eswaran et al., 2019). Land degradation caused 3.6–4.4 petagrams of CO2 emissions in the early 2000s, constituting 10–12% of global carbon emissions (UNCCD, 2019; Le Quere et al., 2018). Recent studies warn continuing unsustainable practices could degrade 95% of Earth's land areas by 2050, impacting 3.2 billion people globally and disproportionately affecting rural communities, smallholder farmers, and the impoverished (Jiang et al., 2024; Hossain et al., 2020). With the global population expected to reach 9.7 billion by 2050, growing demand for agricultural products intensifies pressure on the land due to factors like biodiversity loss, climate variability, and extreme weather events (Duro et al., 2020). Climate change amplifies variations in agriculture, threatening agro-ecosystems and food production stability. Land degradation varies across continents, posing challenges in Europe, Central Asia, Africa, South America, and North America. Western Europe faces soil care challenges from urbanization and unsustainable agriculture (Hossain et al., 2020), while Eastern Europe, Russia, and Turkey shift to intensified agriculture, leading to fertile soil over-exploitation (European Commission (Press release) 2017). Central Asia, including Kazakhstan and Uzbekistan, experiences soil erosion and nutrient depletion due to unsustainable land and water management. In Africa, where 65% of global degraded lands are located, degradation results from inappropriate farming, deforestation, and conflicts affecting land tenure, with soil and water erosion impacting 80%

[1]CSIR-Central Institute of Mining and Fuel Research, Barwa Road Campus, Dhanbad, Jharkhand, 826001
[2]Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR), Ghaziabad, Uttar Pradesh- 201 002
*Corresponding Author Email : bhanubot@gmail.com

Figure 1 : Land degradation

of Africa's soils, especially in the Sahel belt. South America experiences land degradation from water and wind erosion, acidification, and soil salinization, with notable challenges in Chile and Bolivia. In North America, soil degradation results from improper agriculture, livestock practices, and urbanization. Integrated techniques, like cover crops, address soil quality decline, but unsustainable land management practices remain significant contributors across regions (European Commission (Press release) 2017). Challenges are acute in arid regions, constituting 40% of global land and sustaining a population of two billion (Environment Management Group, 2011), with most impacts felt in developing nations, particularly among women and children. Rooted in agricultural activities, deforestation, and climate change, contributing factors include land clearance, soil nutrient depletion, livestock impact, inappropriate irrigation, and human activities like urban sprawl. Land degradation adversely affects food security, causing heightened insecurity, increased prices, and disruptions in agriculture. ISRO reported India's land degradation at 91.30 million hectares in 2005–2006, slightly reducing to 91.21 million hectares in 2015–16, about 27.77% of the country's total area, with Rajasthan, Maharashtra, and Jammu & Kashmir contributing over 40%.

Furthermore, rising temperatures, characterized by severe storms, prolonged droughts, and heavy rainfall, are jeopardizing vital global food crops. A 1°C temperature increase correlates with average global yield reductions of 6.0% for wheat, 3.2% for rice, 7.4% for maize, and 3.1% for soybean. Alarming projections from the IPCC warn that a 4°C temperature rise may lead to a 30% decline in rice production and a 70% drop in maize production in India. Scientific consensus attributes the surge in greenhouse gases to both natural and human-induced factors, intensifying the greenhouse effect and causing Earth's atmosphere and surface to warm. This warming contributes to more frequent and severe climatic events, impacting agriculture, a highly vulnerable sector. While global climate change affects the entire world, its adverse effects vary based on countries' adaptive capabilities. Developing countries, despite historical contributions, are more susceptible, with India's agriculture facing heightened vulnerability due to limited adaptive capacity. This study examines climate change's impact on major crop yields in India, anticipating substantial losses in agricultural productivity. IPCC predictions suggest a mean temperature increase of 1.1–6.4°C by the century's end, potentially resulting in crop yield losses and overall agricultural output reductions ranging from 3–17% and 10–40%, respectively, by 2100.

In agriculture, inorganic fertilizers quickly provide essential nutrients to plants, contrasting with the slower release of organic counterparts. They meet plants' immediate needs, promoting swift growth and aligning with farming requirements. Cost-effective and versatile, inorganic fertilizers enhance soil chemical properties, boosting macro and micro nutrient concentrations. Despite benefits, reliance on them can hinder optimal plant characteristics, reduce crop efficiency, and contribute to land degradation. Excessive nitrogen leads to crop issues, affecting quality and ecosystem balance. Savci (2012) warns of adverse effects, including discoloration, destruction, and reduced yields from overusing chemical fertilizers. Urgent action is needed to manage the intricate

Figure 2 : Soil degradation poses a threat to food security

human-land relationship, striving for the crucial goal of land degradation neutrality amid a growing global population and changing climate. Natural farming offers a promising alternative, prioritizing soil health, biodiversity, and ecosystem resilience to mitigate land degradation and enhance long-term food security (Pavithra, 2023).

Natural Farming as a Resilient Solution

Amidst the grim challenges posed by climate change and land degradation, natural farming emerges as a resilient alternative. Its focus on soil health, reduced environmental impact, and climate resilience make it a valuable strategy in the face of climate change-induced disruptions in agriculture and address food security concerns. This approach, rooted in regenerative agricultural methods, seeks to minimize the use of external inputs, foster ecological balance, and enhance the overall sustainability of farming systems. Key components of natural farming include agroecological principles, organic farming methods, and the incorporation of traditional knowledge. Regenerative agriculture is also known as "agroecology" and "ecological farming". Organic farming, permaculture and biodynamics are all examples of regenerative agriculture. Agroecological practices, such as crop diversification and integrated pest management, contribute to improved soil structure and fertility, reducing the reliance on synthetic inputs. Organic farming methods, which eschew synthetic pesticides and fertilizers, promote healthier ecosystems and minimize the environmental impact of agricultural practices (NRDC, 2021).

Practices involved in Natural Farming:

Cover cropping

The practice of planting crops in bare soil after the main cash crop is harvested. It prevents erosion, improves water retention, promotes soil health, increases biodiversity, and offers various benefits by keeping live roots in the soil. Cover crops can be planted during harvest or in between rows of permanent crops (NRDC, 2021). According to an analysis of yield data gathered from a nationwide survey on cover crops, farmers can anticipate a 3% rise in corn yield and a 4.9% increase in soybean yield following five consecutive years of cover crop implementation (Clark, 2015). Notably, during the drought year of 2012, farmers reported even more substantial yield gains with cover crop usage, experiencing a 9.6% increase in corn yield and an 11.6% boost in soybean yield (Clark, 2015).

Figure 3 : Cover cropping

Holistically managed grazing, or intensive rotational grazing

It is an Indigenous practice that mimics natural grazing patterns. Livestock are moved between pastures regularly, improving soil fertility and allowing grass to regrow. (NRDC, 2021). The aim of grazing management is to 1. enhance land productivity and biodiversity by providing specific plant species with rest periods, 2. minimizing selective grazing by animals, 3. ensuring an even distribution of grazing pressure (Briske et al., 2008). Basically,there are two main ways animals' graze: continuous grazing, where animals roam freely over an extended period in a larger area, and rotational grazing, where they are moved between different smaller areas. This sustainable approach supports healthier ecosystems and better land management (Nordborg, 2016). The perennial pastures promoted by Holistic Management (HM) practices have demonstrated an ability to hold more soil carbon, (Sanjari et al., 2008; Teague et al., 2011; Sherren et al 2012). This phenomenon contributes significantly to carbon sequestration.

Figure 4 : Holistically managed grazing

No-till farming

A method where farmers plant crops without digging or turning the soil. Instead of plowing, they leave the soil undisturbed (NRDC, 2021). There are three primary techniques for no-till farming. The first is known as "sod seeding," where crops are planted using seeding machinery into a sod created by applying herbicides on a cover crop, essentially killing that vegetation. The second method is "direct seeding," which involves planting crops through the residue of the previous crop. The third approach is "surface seeding" or "direct seeding," where seeds are placed on the soil's surface. On flatlands, this method requires no machinery and involves minimal labor (Willy, 2010).

Research from over 19 years of tillage studies conducted by the United States Department of Agriculture Agricultural Research Service found that no-till farming renders soil less prone to erosion compared to ploughed soil in Great Plains regions. Specifically, the first inch of no-till soil exhibits a higher concentration of aggregates and is found to be two to seven times less susceptible to erosion than its ploughed counterpart. The increased presence of organic matter in this layer is believed to play a crucial role in binding soil

Figure 5 : No-till farming

particles together, contributing to the enhanced erosion resistance observed in no-till farming practices (Blanco-Canqui, 2009).

Composting

Composting is a natural process that transforms waste, such as manure or food scraps, into nutrient-rich fertilizer (NRDC, 2021). Composting organisms thrive with four equally vital components: Carbon serves as the energy source, with materials rich in carbon being brown and dry; Nitrogen is essential for the growth of organisms responsible for oxidizing carbon, found in green and moist materials like colorful fruits and vegetables; Oxygen is crucial for the oxidation of carbon, with aerobic bacteria requiring oxygen levels above 5%; Water, in the right proportions, sustains microbial activity without causing low-oxygen conditions, ensuring the overall effectiveness of the composting process (EPA, 2013; The Science of Composting, 2016).

The UNEP Food Waste Index highlights the global issue of 1.3 billion tonnes of annual food loss, exacerbated by the COVID-19 pandemic causing hunger for 811 million people in 2020. Food loss contributes to climate change, biodiversity loss, and pollution. UNEP and IGES endorse composting as an excellent method to manage organic waste and mitigate environmental impacts. Proper composting of daily organic waste reduces reliance on chemical fertilizers, enhances soil fertility, and improves water retention and nutrient delivery to plants. Additionally, reducing food waste through composting plays a vital role in lowering greenhouse gas emissions, estimated at 8-10% globally, and mitigating stress on biodiversity caused by the demand for land and water resources.

Figure 6 : Composting

Reducing or eliminating the use of fossil fuel-based substances, like pesticides

Farmers strategically focus on improving soil health and implementing natural pest control techniques, prioritizing the cultivation of fertile and resilient soil. This approach minimizes the reliance on chemical treatments, irrespective of the pursuit of organic certification. The Food and Agriculture Organization (FAO, 2021) reports a continual global increase in pesticide use, exceeding 4.1 billion kilograms in 2018. This underscores the crucial need to explore alternative methods aimed at diminishing dependence on chemical pesticides.

Agroforestry

Agroforestry, inspired by forest ecosystems, involves the incorporation of trees and shrubs into farming practices, creating mini-forests on agricultural lands (NRDC, 2021). In this approach, the canopy of trees serves a pivotal role in mitigating soil erosion by intercepting rainfall, diminishing raindrop force, and reducing soil erosion potential (Kaushal et al., 2017). Furthermore, tree litter aids in the formation of water-stable aggregates, contributing to a decrease in surface runoff volume.

Three primary agroforestry systems exist (FAO, 2015): Agrisilvicultural systems combine crop cultivation with tree growth, as seen in alley cropping or homegardens. Silvopastoral systems integrate forestry with animal grazing, occurring in pastures, rangelands, or on-farm. Agrosylvopastoral systems

Figure 7 : Agroforestry

integrate trees, animals, and crops, exemplified by homegardens incorporating scattered trees on croplands, often used for post-harvest grazing. McDonald et al. (2002) reported a significant reduction in soil erosion by 21 times and a sevenfold decrease in surface runoff compared to control soils in agroforestry practices. Agroforestry stands as a prominent tool for climate change mitigation, acknowledged in over 60 countries worldwide.

Conservation buffers, such as hedgerows and riparian buffers

Environmental concerns are addressed through the implementation of designated sections of land, each tailored to specific purposes. Hedgerows, comprised of rows of shrubs or trees surrounding fields, serve as a multifaceted solution. Biodiversity hedgerows incorporate native flowering plants and shrubs, attracting beneficial insects like pollinators and natural predators of pests, thereby enhancing biodiversity in agricultural landscapes and supporting ecosystem services. Windbreak hedgerows, planted with tall, dense trees in windy regions, protect crops from wind damage and reduce soil erosion. Wildlife corridor hedgerows are designed to connect fragmented habitats, facilitating the movement of animals between ecosystems, promoting genetic diversity, and ensuring overall ecological health (NRDC, 2021).

Riparian buffers, adjacent vegetated areas near streams, play a crucial role in environmental management. Along riverbanks, vegetated streambanks with native grasses, shrubs, and trees stabilize the soil, reduce erosion, and prevent sediment entry into the water. In agricultural landscapes, filter strips serve as riparian buffers between cropland and water bodies, trapping sediments and nutrients before reaching the water. Urban riparian buffers in urban areas, designed along streams or creeks with native vegetation, enhance water quality, provide habitat for urban wildlife, and improve the aesthetic appeal of the

Figure 8 : Hedgerow

Figure 9 : Riparian buffer

surroundings. Both hedgerows and riparian buffers integrate natural features into agricultural landscapes, promoting sustainability, biodiversity, and responsible land and water resource management.

Environmental and Economic benefits of Natural agriculture:

Regenerative farming practices have demonstrated significant soil enhancements, resulting in healthier crops, augmented moisture levels, rich chocolate-coloured soil, and vibrant microbial communities. These improvements contribute to the optimization of water, nutrient, and carbon cycles, fostering increased plant growth and overall soil health.

The reduction in chemical and pesticide usage by regenerative farmers not only leads to healthier soils but also plays a crucial role in mitigating environmental issues. This practice helps minimize harmful algal blooms, enhancing water quality and availability through pollution reduction. Moreover, the conservation of more water on the farm enhances resilience against both floods and droughts, contributing to sustainable agriculture. Harnessing the combined power of photosynthesis and microorganisms, soil becomes a potent carbon absorber, serving as Earth's largest carbon storage. By adopting appropriate regenerative techniques, farmers can potentially draw down 250 million metric tons of CO2 equivalent greenhouse gases annually in the United States alone. This process holds the potential to reverse the adverse effects of climate change. The United Nations estimates that, by 2030, global soil carbon sequestration has the potential to mitigate around five gigatonnes of carbon per year, underscoring the significant role soil management can play in addressing climate change on a global scale.

Natural agricultural practices play a pivotal role in driving rural economic development, orchestrating a transition towards a more equitable agricultural economy. The foundation of this approach lies in strategic investments in processing facilities, value-added products, and food purchasing companies, which collectively empower farmers and elevate their share of revenue. The economic benefits stem from the enhancement of overall profitability, improvement in crop health, and the reduction of operational costs inherent to conventional agricultural methods. The systematic adoption of natural agricultural practices not only promotes economic inclusivity but also contributes to the resilience of farmers by facilitating more effective management of risks and debt.

The economic advantages of natural agricultural practices are underscored by the creation of a fairer and more sustainable economic ecosystem within rural communities. By prioritizing ecological principles, such as soil health and biodiversity, natural agriculture aligns with sustainable economic development goals. Challenges inherent to this transition exist, but regenerative farmers actively engage in addressing these impediments, driving the evolution towards a more equitable and economically viable agricultural system. Through a holistic lens, the economic benefits of natural agricultural practices manifest as a transformative force, fostering rural economic growth, sustainability, and the empowerment of farming communities.

Promoting Natural Agricultural Practices in India: Initiatives and Programs

The Indian Council of Agricultural Research (ICAR), based in New Delhi, initiated the Network Project on Organic Farming (NPOF) in the fiscal year 2004-05, designating the Indian Institute for Farming Systems Research (IIFSR) as the nodal institute. Launched during the 10th five-year plan, the NPOF absorbed the National Project on Development and Use of Biofertilisers under the Ministry of Agriculture, Government of India. The NPOF aims to promote organic farming practices, reduce reliance on chemical fertilizers, and optimize farm resource utilization. It provides financial and technical support for organic input production units, emphasizing market waste compost, biofertilizers, biopesticides, and vermicompost hatcheries. Implemented through the Department of Agriculture & Cooperation (DAC), Ministry of Agriculture, and the National Centre of Organic Farming (NCOF) in Ghaziabad, the NPOF facilitates financial assistance based on recommendations from a Screening Committee under the NCOF Director. Credit-linked

back-ended subsidies for production units are supported through commercial/scheduled banks and NABARD. The Capital Investment Subsidy Scheme (CISS) aids municipalities, APMCs, companies, and entrepreneurs in establishing organic inputs production. The NPOF promotes various organic inputs, such as four bio-fertilizers (Rhizobium, Azotobacter, Azospirillum, and PSB) and two organic fertilizers (City Waste Compost and Vermi-compost). The scheme has resulted in processing capacities for 708 tons of agricultural waste daily, 5606 MT of bio-fertilizers, and over 17000 tons of vermiculture and vermicompost. Since inception, certified organic farming area expanded from 42,000 hectares in 2003-04 to 865,000 hectares in 2007-08, accompanied by a significant increase in organic food production from 4.09 lakh tons in 2006-07 to 9.02 lakh tons in 2007-08.

Zero Budget Natural Farming (ZBNF) is an agricultural approach advocating the cultivation of crops without external inputs like fertilizers and pesticides, resulting in zero production costs. Introduced by agriculturist Padmashri Subhash Palekar in the mid-1990s, ZBNF emphasizes sustainable practices, soil fertility preservation, and chemical-free agriculture to enhance farmers' income. Core principles include excluding external inputs, using local seeds, microbial seed treatment, applying microbial inoculants, cover cropping, and integrating trees and livestock. ZBNF's polycrop model combines short and long-duration crops, aiming to recover main crop costs from short-duration crop income, achieving zero expenditure. Key elements include Bijamrita (seed treatment), Jiwamrita (soil fertility revival), Mulching (topsoil cover), and Waaphasa (soil aeration). ZBNF addresses financial strain on farmers highlighted by National Sample Survey Office (NSSO) data, offering a solution by reducing production costs and breaking the debt cycle. Government initiatives like Paramparagat Krishi Vikas Yojana (PKVY) and Rashtriya Krishi Vikas Yojana (RKVY) support ZBNF. Benefits include cost reduction, environmental friendliness, sustainable farming, and potential income doubling by 2022. ZBNF aligns with environmentally conscious agriculture, and Andhra Pradesh aims to be the first state practicing 100% natural farming by 2024, supported by the Union Finance Minister's acknowledgment of ZBNF's potential in income doubling efforts.

Case Studies

NITI Aayog, in its commitment to promoting natural farming, recognizes the importance of substantiating and validating these practices. The organization has taken proactive measures to initiate research activities in this regard. This compilation aims to document and gather the exemplary practices employed by farmers across diverse regions in India, forming a compendium of success stories in natural farming. The stories of success come from sources such as Krishi Vigyan Kendras (KVK) all over India. Notably, farmers have come up with their own techniques and approaches to implement the tenets of natural farming, incorporating elements like Farm Yard Manure (FYM), vermicompost, etc. Their endeavors extend to embracing multi-cropping, encompassing the cultivation of cereals, pulses, vegetables, fruits, medicinal plants, and flowers, all in alignment with the principles of natural farming (Patel et al., 2022).

Most farmers have reported that switching to natural farming methods has significantly lowered their cultivation costs while enhancing the quality and quantity of their produce. This shift has also led to higher prices for the naturally grown products. Farmers have emphasized noticeable improvements in both their own health and that of consumers, attributing it to the cultivation and consumption of chemical-free, natural products. The goal of compiling these best practices is to raise awareness about the benefits and actual methods of natural farming, encouraging widespread adoption across the country (Patel et al., 2022).

Conclusion

In conclusion, this paper examines the critical nexus of land degradation, climate change, and agricultural practices impacting global food security. It highlights the pressing need for immediate and strategic interventions to address the interconnected challenges of unsustainable farming, deforestation, and climate variability, leading to the degradation of Earth's land. Projected outcomes signal the urgency to safeguard 3.2 billion people, especially in rural and impoverished regions, from potential severe consequences.

Table 1 : Crops cultivated through natural farming (Patel et al., 2022).

Sl. No	States	No. of farmers	Crops
1	Andhra Pradesh	21	Vegetables, Citrus, Red gram, Paddy, Black rice, Maize, Ragi, Ground nut
2	Bihar	3	Wheat, Paddy, Rapeseed, Potato
3	Gujarat	13	Banana, Falsa, Papaya, Groundnut, Mixed Vegetables, Mixed Fruits Paddy, Wheat, Coconut & Groundnut, Chilli, Beetroot
4	Haryana	7	Wheat, Rice, Sugarcane, Lemon, Banana, Pomegranate, Apple, Vegetables, Root crops, Marigold, Chick pea
5	Himachal Pradesh	14	Apple with Cereals & Vegetables, Vegetables, Turmeric, Maize, Apple & Pea, Sugarcane, Sunflower, Urad
6	Kerala	5	Exotic vegetables, Rice, Turmeric, Orchid, Tubers
7	Madhya Pradesh	3	Mango, Coriander, Mustard, Gram, Wheat, Green gram, Black gram, Turmeric, Fruits and Vegetable
8	Maharashtra	8	Sugarcane, Soyabean, Paddy, Ground nut, Wheat, Onion, Vegetables, BT Cotton, Sorghum
9	Odisha	4	Indigenous Aromatic Paddy, Black rice, Red rice, Vegetables, Red gram, Green gram, Finger millet
10	Punjab	5	Rice, Wheat, Pear, Vegetables, Flowers
11	Rajasthan	11	Cluster bean, Mung bean, Wheat, Chickpea, Mustard, Kinnow, Fenugreek, Maize, Henna, Sesame
12	Uttar Pradesh	14	Paddy, Scented Rice, Wheat, Sugarcane, Papaya & Ground Nut, Mango, Aonla, Mosambi, Brahmi, Moringa, Wheat+ Pea+Gram+Sun flower, Mustard+Pea, Millets, Mint + Gree n gram
13	Uttarakhand	2	Wheat
Total		**100**	

Natural farming is a resilient alternative to conventional agriculture, proposing practices like cover cropping, holistic grazing, no-till farming, composting, reduced fossil fuel use, agroforestry, and conservation buffers. These practices offer a promising route to achieving land degradation neutrality, with outlined benefits such as enhanced soil health, reduced environmental impact, and economic inclusivity. The Indian context showcases initiatives like the Network Project on Organic Farming and Zero Budget Natural Farming, promoting natural farming practices and reducing reliance on chemical inputs. Case studies from various Indian states demonstrate tangible improvements in crop yields, economic viability, and environmental sustainability through natural farming. In essence, the paper advocates urgent global action to transition toward sustainable and regenerative agricultural practices, emphasizing the transformative potential of natural farming. The insights presented contribute to the evolving knowledge on sustainable agriculture, providing guidance for policymakers, researchers, and farmers to collaboratively address the intricate challenges of land degradation and climate change.

References

1. Blanco-Canqui, H., Mikha, M. M., Benjamin, J. G., Stone, L. R., Schlegel, A. J., Lyon, D. J., ... & Stahlman, P. W. (2009). Regional study of no□till impacts on near□surface aggregate properties that influence soil erodibility. Soil Science Society of America Journal, 73(4), 1361-1368.
2. Briske, D. D., Derner, J. D., Brown, J. R., Fuhlendorf, S. D., Teague, W. R., Havstad, K. M., ... & Willms, W. D. (2008). Rotational grazing on rangelands: reconciliation of perception and experimental evidence. Rangeland Ecology & Management, 61(1), 3-17.
3. Clark A., 2015. Cover Crops for Sustainable Crop Rotations. SARE. Sustainable Agriculture Research and Education. https://www.sare.org/resources/cover-crops/

4. Composting At Home. Reduce, Reuse, Recycle. 2013. US Environmental Protection Agency. https://www.epa.gov/recycle/composting-home.
5. Duro, J. A., Lauk, C., Kastner, T., Erb, K. H., & Haberl, H. (2020). Global inequalities in food consumption, cropland demand and land-use efficiency: A decomposition analysis. Global Environmental Change, 64, 102124.
6. Environment Management Group. 2011. Global Drylands: A UN system-wide response. https://unemg.org/2018/images/emgdocs/publications/Global_Drylands_Full_Report.pdf
7. Eswaran, H., Lal, R., & Reich, P. F. (2019). Land degradation: an overview. Response to land degradation, 20-35.
8. European Commission (Press release) (2017) No region left behind: launch of the platform for coal regions in transition. https://europa.eu/rapid/press-release_IP-17-5165_en.htm
9. FAO. 2015. Agroforestry. Food and Agriculture Organization of the United Nations. https://www.fao.org/forestry/agroforestry/80338/en/
10. FAO. 2021. How composting can reduce our impact on the planet. United Nations Environmental Programme (UNEP). https:// www.unep.org/news-and-stories/story/how-composting- can-reduce-our-impact-planet
11. Hossain, A., Krupnik, T. J., Timsina, J., Mahboob, M. G., Chaki, A. K., Farooq, M., ...&Hasanuzzaman, M. (2020). Agricultural land degradation: processes and problems undermining future food security. In Environment, climate, plant and vegetation growth (pp. 17-61). Cham: Springer International Publishing.
12. Jiang, K., Teuling, A. J., Chen, X., Huang, N., Wang, J., Zhang, Z., ... & Pan, Z. (2024). Global land degradation hotspots based on multiple methods and indicators. Ecological Indicators, 158, 111462.
13. Kaushal, R., Kumar, A., Alam, N. M., Mandal, D., Jayaparkash, J., Tomar, J. M. S., ... & Mishra, P. K. (2017). Effect of different canopy management practices on rainfall partitioning in Morus alba. Ecological Engineering, 102, 374-380.
14. Lambin, E. F., Gibbs, H. K., Ferreira, L., Grau, R., Mayaux, P., Meyfroidt, P., ... & Munger, J. (2013). Estimating the world's potentially available cropland using a bottom-up approach. Global environmental change, 23(5), 892-901.
15. Le Quéré, C., Andrew, R. M., Friedlingstein, P., Sitch, S., Hauck, J., Pongratz, J., ... &Zaehle, S. (2018). Global carbon budget 2018. Earth System Science Data Discussions, 2018, 1-3.
16. McDonald, M. A., Healey, J. R., & Stevens, P. A. (2002). The effects of secondary forest clearance and subsequent land-use on erosion losses and soil properties in the Blue Mountains of Jamaica. Agriculture, Ecosystems & Environment, 92(1), 1-19.
17. Nordborg, M. (2016). Holistic management–a critical review of Allan Savory's grazing method.
18. NRDC, 2021. Regenerative Agriculture 101. Natural Resources Defense Council. https://www.nrdc.org/stories/regenerative-agriculture-101.
19. Patel, N., S. Athira., Sethi, T., Meena, S. 2022. Compendium of Success Stories of Natural Farming. NITI Aayog.
20. Pavithra, K. M. 2023. Data: Total Extent of Land Degradation in India over 90 Million Hectares. FAQTLY. https://factly.in/data-total-extent-of-land-degradation-in-india-over-90-million-hectares/
21. Sanjari, G., Ghadiri, H., Ciesiolka, C. A., & Yu, B. (2008). Comparing the effects of continuous and time-controlled grazing systems on soil characteristics in Southeast Queensland. Soil Research, 46(4), 348-358.
22. Savci, S. (2012). An agricultural pollutant: chemical fertilizer. International Journal of Environmental Science and Development, 3(1), 73.
23. Sherren, K., Fischer, J., &Fazey, I. (2012). Managing the grazing landscape: Insights for agricultural adaptation from a mid-drought photo-elicitation study in the Australian sheep-wheat belt. Agricultural systems, 106(1), 72-83.
24. Teague, W. R., Dowhower, S. L., Baker, S. A., Haile, N., DeLaune, P. B., & Conover, D. M. (2011). Grazing management impacts on vegetation, soil biota and soil chemical, physical and hydrological properties in tall grass prairie. Agriculture, ecosystems & environment, 141(3-4), 310-322.
25. The Science of Composting. 2016. Composting for the Homeowner. University of Illinois. https://web.archive.org/web/20160217221013/http://web.extension.illinois.edu/homecompost/science.cfm
26. UNCCD, 2019. United Nations Convention to Combat Desertification – Land in Numbers 2019. Risks and Opportunities. UNCCD secretariat, Bonn, Germany.
27. Willemen, L., Barger, N. N., Brink, B. T., Cantele, M., Erasmus, B. F., Fisher, J. L., ... & Scholes, R. (2020). How to halt the global decline of lands. Nature Sustainability, 3(3), 164-166.
28. Willy H. Verheye, ed. (2010). "Soil Engineering and Technology". Soils, Plant Growth and Crop Production Volume I. EOLSS Publishers. p. 161. ISBN 978-1-84826-367-3.
29. Yengoh, G. T., Dent, D., Olsson, L., Tengberg, A. E., Tucker III, C. J., Yengoh, G. T., ... & Tucker, C. J. (2016). Development of Land Degradation Assessments. Use of the Normalized Difference Vegetation Index (NDVI) to Assess Land Degradation at Multiple Scales: Current Status, Future Trends, and Practical Considerations, 37-39.

Environment

Peer Reviewed

Reduce, Reuse and Recycle: Organic Waste

Pankaj Srivastava[1], Shikha Munjal[2], Preetam Singh Gour[3], Nitin P. Singh[4]*

Abstract

Most of the major cities of India and other countries have Municipal solid waste management (MSWM) as one of the major environmental problem. Most of the municipal solid waste (MSW) is disposed unscientifically in open dump sites and landfills. These offensive managements create problems to public health and the environment and causes hazards to inhabitants. Endeavor for management of organic waste is to get better environment traits, reduce waste, and enhance resource recovery. Unremitting fabrication of poisons like nitrous oxide and carbon-di-oxide released into atmosphere make the atmosphere to get warm and climate change. Incinerate waste also causes air pollution, acid rain and increases the Earth's global mean temperature. By means of better scientific recycling, decomposing and composting these wastes can easily be transformed into useful fertilizer and compost.

Keywords : Organic waste, inorganic waste, compost, solid waste, liquid waste

What is waste?

"Waste" is everything that has no longer use and needs to be discarded, right? This term applies to every unwanted, unusable, worthless and defective material generated from human activities, but there are particular definitions for waste that affect how waste is synchronized and must be handled. Example includes solid waste, hazardous waste, organic and inorganic waste as shown in figure 1.The initiation of the industries determined an increase in the utilization, and therefore an increase in the amount of waste. But, there are no cleaners which re-use a large part of that waste, and therefore it accumulates in large quantities that can lead to environmental and health problems as well as soil and water pollution.Human beings are trying to find some solutions because the waste associated problems are increasing day by day in our society. Now days, India faces a serious garbage problem because people don't have the right knowledge for waste disposal, and how to reused it.

Classification of waste

In general, waste is classified as-

Solid Waste

Solid Waste means the non-soluble garbage, unwanted or useless solid material generated from human activities in residential, industrial and marketable areas and discarded by society. Examples include s radioactive waste, biomedical waste and agriculture waste etc. Solid waste is non-biodegradable type waste which cannot be

Figure 1. Types of wastes

[1,3,4]Department of Physics, School of Basic Sciences, Jaipur National University, Jaipur, India
[2]Department of Chemistry, School of Basic Sciences, Jaipur National University, Jaipur, India
Email: pankajsrivastava0811@jnujaipur.ac.com

decomposed and as such in the environment.

Liquid Waste

Liquid Waste is the liquid form of the waste generated from society which is harmful to the people and environment. Examples include sewage, household wastewater (bathing, sinks, tubes, showers, dishwasher etc), pesticide solution from agriculture waste etc.

Inorganic waste

Inorganic waste is the waste that comes from non-renewable resources such as mineral, petroleum and consisting non-biodegradable material which is very difficult to destroy. Inorganic bacteria are decomposed by bacteria. This type of waste includes plastic bottles, plastic bags, cans, plates of metal, paper etc.

Organic Waste

Organic waste is the green, biodegradable waste which comes from renewable resources such as plant and animal material. It is usually called as wet waste. Organic Waste is broken down into carbon-di-oxide, water, methane and smaller and odorless organic molecules which are decomposed by micro-organism. Examples include vegetable and fruit waste, human waste, garden waste, and animal waste etc.

When MSW (Municipal Solid Waste) is deposited in a landfill, then two main products are formed-Digestate (late-stage component which is used as fertilizer), Biogas (CH_4 (45-70%), CO_2(30-45%) and N_2O and H_2S (approx 1%). Organic waste firstly under goes aerobic (with oxygen) decomposition, then carbon-di-oxide, water and little methane is generated. After few months, organic wastes decomposed anaerobically which is used to treat animal slurry, sewage sludge and some forms of biodegradable waste [1] and (without oxygen), then biogas (methane powerful greenhouse gas than CO_2) is generated in lager amount which is very valuable resource. The green house gas are those which behave like coverlet around the earth, causing the earth temperature to grow leading catastrophic phenomena .The green house gas (methane), a by-product of anaerobic digestion can be collected and combusted and further used to generate heat/or electricity.The excess amount of green house gases (methane, $CO_2$and chlorofluorocarbon) absorbs infrared radiation and heat up the earth's atmosphere, causing global warming and climatechange.

If the organic waste material is well decayed (aerobically or anaerobically), the odorless and pathogen-free black brown mixture can be used as soil conditioner.

Sources of Organic Waste

i. Animal Waste
ii. Agriculture waste
iii. Industrial Waste
iv. Human Waste
v. YardWaste

Organic waste and Environment

When the organic waste is not managed properly, then it can cause serious health and environmental problems. But if we use the same garbage properly, it is very beneficial for environment as well as for society. The overall aim for management of organic waste is to improve environment traits, reduce waste production, and enhance resource recovery and our health. People are continually producing tons of harmful gases i.e. nitrous oxide and carbon – di – oxide into atmosphere by burning waste due to which atmosphere get warm. Nitrous oxide is three hundred and ten times more effective in heat-trapping than carbon-di-oxide. The gradually heating up of the environment has main consequence of climatechange.

Incinerating waste also produces toxic and hazardous dioxins that causes many serious problems to the environment. Gases from incinerating waste causes air pollution which contribute acid rain. There are many greener, eco-friendly waste management methods such as recycling and composting in which trash is transformed into something useful and decomposes organic waste into useful fertilizer and compost.

Ground water pollution

As rain falls on landfill sites, organic and inorganic constituents dissolve and forming highly toxic, hazardous chemicals that discharge into groundwater, cause groundwater pollution. Water that rinses through these chemicals contains high level of toxic metals, ammonia and pathogens. This can result serious contamination of the local groundwater. This mixture generally creates a high biological oxygen demand means it can rapidly de-oxygenated water. When this water reaches rivers

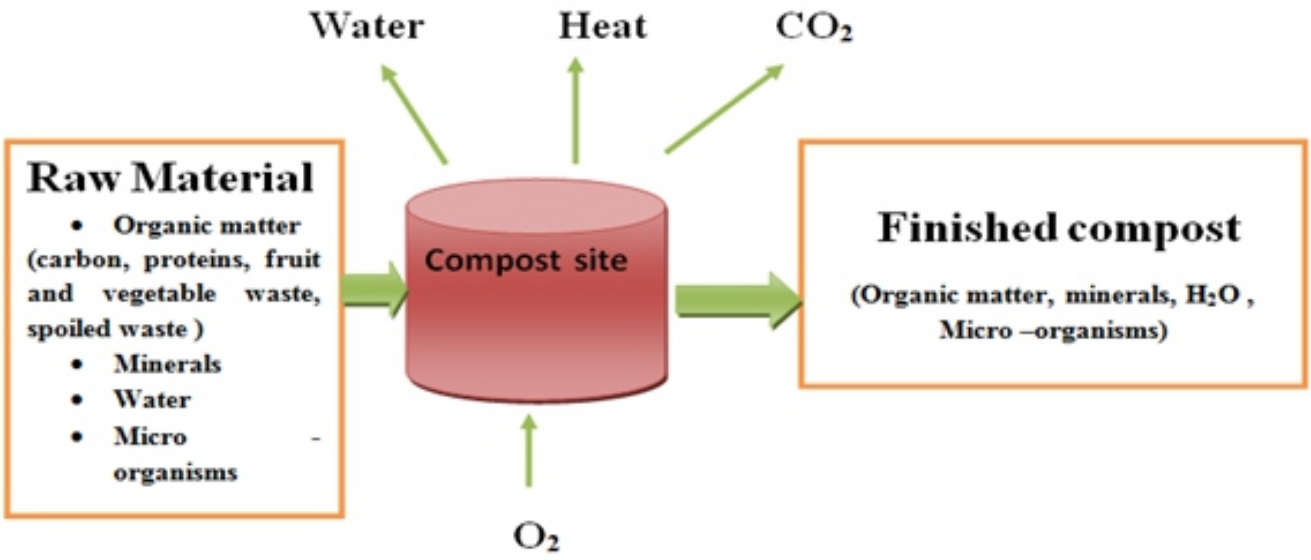

Figure 2. Composting Process

and lakes, it can cause death of aquatic life.

Compost

Compost is considered as "Black Gold" because it is much greener option than dumping trash in landfill. It occurs in an open dump, hygienic landfill or unmanaged waste mass [2]. The composting process involves four components – organic matter, minerals, water and micro-organisms (Figure 2).

It is the dynamic process of speedy succession of mixed microbial population that involves bacteria, fungi and actino- mycetes [3] and recycling the various organic waste includes fruit and vegetable waste, spoiled rice, grass cuttings, paper napkins, teabags (made from natural materials i.e. – hemp, cotton), and cardboard egg boxes, fallen leaves which are easy to break down, produces soil conditioner and provide essential nutrient nitrogen as well as moisture. When this soil conditioner is added to the soil, it enhances the fertility of soil and help plants to grow. Compost maintains the humus level in the soil that improves the structure and biophysical properties of soil [4], helps to bind nutrients, reduce the need of chemical fertilizer, encourage the production of beneficial bacteria that help in creating humus and ensures the proper circulation of air and water.Compost is rich in nutrients. It is the multi-step process in which proper amount of nutrient are important for the growth of plants. The main essential nutrients are N (nitrogen), P (Phosphorus), and K (Potassium).and the carbon/nitrogen (C/N) ratio is very important and the fastest way to produce fertile, sweet –smelling compost which depends upon the action of micro-organisms. It requires Carbon as a source of energy for the micro-organisms and nitrogen for cell proteins. Most of the carbon consumed by micro-organisms and converted into CO_2 and water [5], the rest amount of carbon is combined with nitrogen in the cell. When carbon: nitrogen ratio is increases in the compost, then decomposition process becomes slow [6, 7, 8].

Below are a few key areas that are most important for decreasing the environmental footprint of organic waste.

- **Diverting organic waste from the landfill or incineration** to instead support better managed composting and anaerobic digesters that can provide high quality, natural fertilizer to urban green spaces, and methane to be used as fuelsource.
- **Government cooperation with the informal sector** can yield a more efficient, regulated, and orderly urban recycling system that can help lift poor migrants out of poverty while bringing some revenue to the municipal government. Incorporation of the informal sector has been effective in other developing countries such as Mozambique.
- **Local business policies that encourage there use of recycled materials** can decrease the raw resource consumption from producing products that

urban residents consume. This would reduce the ecological foot print of urban lifestyles, which is critical for urban sustainability as more and more Indian migrate to cities.

- **Public participation in reliable was the management data collection and disclosure** when governments cannot provide this data themselves. Widely available data can help other diagnose the true extent of the urban waste issue. One idea is for urban residents to participate in data collection through smart phone applications that allow them to help pin point where nearby landfills, waste incinerators; anaerobic digesters, etc. are located. Such data could help inform future waste management priorities. By adopting a more socially just, circular economy, and resource utilization approach towards urban waste management, Indian cities can reduce their per capita environmental footprint, critical for reducing the environmental impacts of urbanization. Wiser resource utilization can help India cities become more sustainable, and addressing environmental injustices of the current waste system is a step towards alleviating the social inequalities that influence liability of India cities for allresidents.

Of course, these changes will be difficult. Public policy and regulations are not enough. As is the case with most other issues in China and the developing world, there needs to be reliable and accessible data so we can begin to fully understand the scope of the problems and which solutions are effective.

Governments must also enforce policies and create an efficient waste collection infrastructure. We also cannot forget that public education for India's economically and socially diverse population is no easy task, yet will be crucial for proper waste separation at the source of disposal. As Indian cities continue to grow rapidly and strive to achieve world-class status, investment in sustainable urban waste management systems and a broader movement towards a circular economy model will be necessary for more environmentally friendly, livable, and sustainable cities.

Summary

This article reviewed that the organic waste is not a source of environmental pollution if it is used correctly. It is a valuable resource because it can be converted into viable products that has many benefits. Composting, a action of mixing of different types of organic waste can be used as soil conditioner and as a fertilizer which is toxic free, and eco-friendly. From the above article, we conclude that, when agriculture waste composting is added to animal manure, it will enhance the degradation process. Different methods of composting have a different effect on the nutrient status of compost.

References

1. X. Font,A. Artola, A. Sánchez, *Sensors*, 11(4), 4043-4059 (2011).
2. E. C. Makwara, S. Magudu, *EJSD*, 2(1), 67-98 (2013).
3. M. C. Vargas, G. F. Suárez; E. M. J. López, *J. Moreno Waste Management*, 30, 771-778 (2010).
4. K.S. Reddy, N. Kumar, A.K. Sharma, C.L. Acharya R. C. Dalal, *AUST J EXP AGR* 45, 357-367 (2005).
5. L. M. Cammen, *Marine Biology*, Volume 61, 9-20(1980).
6. R. Ahmad, G. Jilani, M. Arshad, Z. A. Zahir, A. Khalid, *Ann Microbiol*, 57 (4) 471-479 (2007).
7. The Practical Handbook of Compost Engineering, 1st edition, 117 – 236, Lewis Pub., Boca Raton, Florida, USA, 1 .117-236 (1993).
8. Barker A.V. Amer. Chem. Soc., 140-162(1997).

Environment

Peer Reviewed

Mitigating Global Warming Through Earth Science: Geological Strategies

Bodhisatwa Hazra[1,2], Chinmay Sethi[1,2] and Prasenjeet Chakraborty[1,2]*

Environment

Global warming poses a significant challenge for our planet, characterized by a prolonged rise in Earth's average surface temperature primarily linked to human activities (Figure 1). These activities involve the emission of greenhouse gases like carbon dioxide (CO_2), methane (CH_4), and nitrous oxide (N_2O) into the atmosphere over extensive periods. These gases capture heat within the atmosphere, resulting in what is known as the greenhouse effect. The impacts of global warming are profound and far-reaching. Increasing temperatures have resulted in intense and frequent weather events. For instance, the destructive bushfires in Australia between 2019 and 2020 devastated millions of acres, destroying thousands of homes and causing the deaths or displacement of close to 3 billion animals (Fletcher et al., 2021). Another case is the increasing intensity of hurricanes in the Atlantic Ocean, exemplified by Hurricane Maria in 2017, which caused widespread devastation in Puerto Rico, resulting in significant loss of life and infrastructure damage. The melting of ice caps in the polar regions contributes to the increase in sea levels, endangering coastal communities. The swift decline of Greenland's ice sheet, shedding 532 billion tons of ice in just 2019, serves as a stark illustration of this phenomenon.

India, with its vast and diverse geography, is particularly vulnerable to the effects of global warming. The country experiences a wide range of climate-related challenges, from intense heatwaves in the northern plains to devastating floods in the north-eastern states.

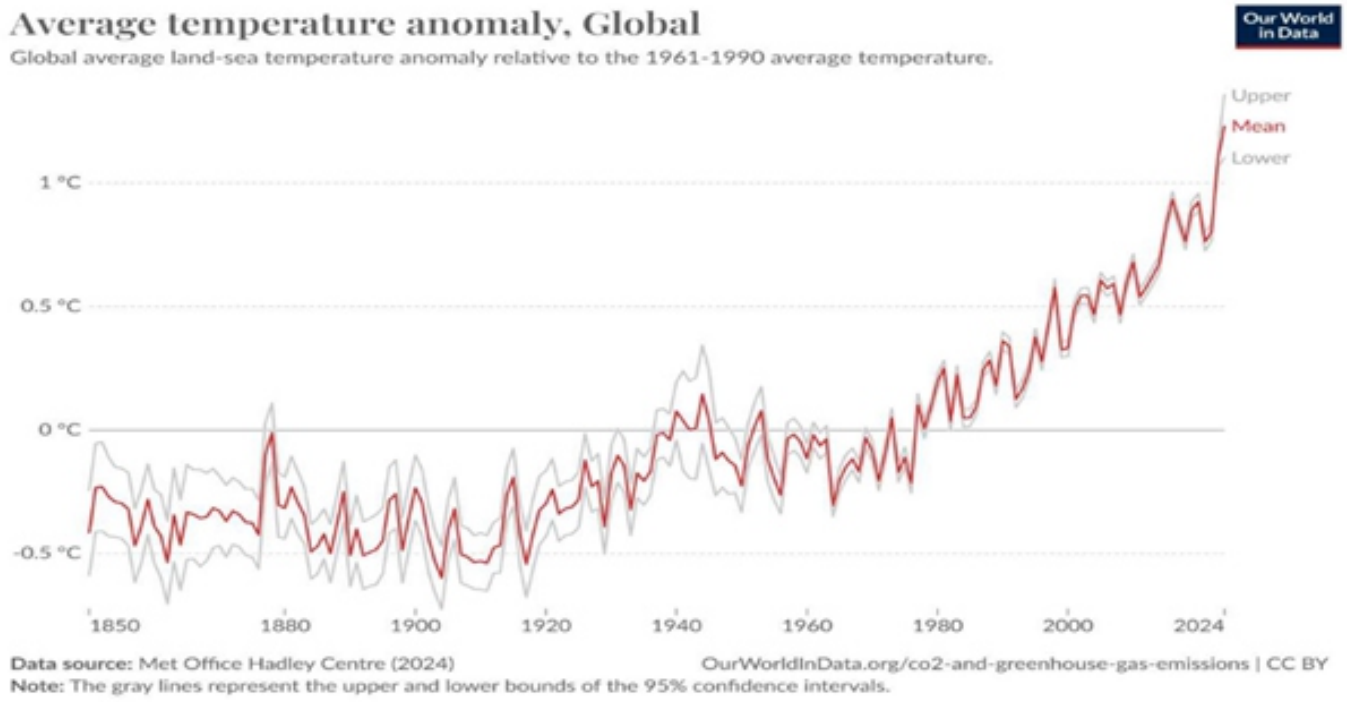

[1]CSIR-Central Institute of Mining and Fuel Research, Barwa Road Campus, 826015 Dhanbad, India
[2]Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR), Ghaziabad 201 002, India
*Corresponding Author Email : bodhisatwa.hazra@gmail.com

For instance, the 2015 heatwave in India claimed over 2,500 lives, highlighting the severe impact of rising temperatures (Pattanaik et al., 2017). Rising temperatures are also exacerbating water scarcity in already drought-prone regions, affecting agriculture and livelihoods. The 2019 drought in Maharashtra, which led to significant crop failures and water shortages, is a stark example. The monsoon, which is crucial for India's agriculture, is becoming increasingly erratic, leading to both droughts and floods. In 2018, Kerala experienced unprecedented flooding during the monsoon season, resulting in over 400 deaths and massive displacement. Coastal areas are facing the dual threat of rising sea levels and increased frequency of cyclones, endangering millions of people. Cyclone Amphan in 2020 caused extensive damage in West Bengal and Odisha, displacing thousands and resulting in significant economic losses. Additionally, the Himalayan glaciers, which are a vital water source for many rivers in northern India, are retreating at an alarming rate. The Gangotri Glacier, which feeds the Ganges River, has been retreating rapidly, threatening water supply for millions. These examples illustrate the urgent need for India to address the impacts of global warming to safeguard its people and environment.

In response to these challenges, India has laid out a comprehensive plan to mitigate global warming. The nation is dedicated to lowering the intensity of its greenhouse gas emissions and boosting the proportion of renewable energy in its energy portfolio. As part of its efforts to combat climate change, India has established a goal to achieve carbon neutrality by 2070 (Bhattacharyya et al., 2022). This long-term goal reflects the country's dedication to significantly lowering its carbon footprint and transitioning towards a sustainable future. To achieve these ambitious targets, India is exploring various strategies, including underground geological sequestration. This encompasses the capture of CO_2 emissions from industrial sources and their injection into deep geological formations, such as exhausted oil and gas fields, non-mineable coal seams, tight sandstones, and saline aquifers, for storage. By injecting CO_2 into these underground reservoirs, India can effectively sequester large quantities of CO_2, preventing it from entering the atmosphere and contributing to global warming.

One of the most promising types of geological formations for CO_2 sequestration is shale rock (Hazra et al., 2022). Shale formations are abundant and widely distributed around the world, making them attractive targets for CO_2 storage. These rocks are characterized by their fine-grained texture and low permeability, which makes them capable of trapping CO_2 effectively. The mechanism of CO_2 storage in shale formations involves several processes, including structural trapping, solubility trapping, and mineral trapping. Structural trapping occurs when CO_2 is injected into a reservoir rock positioned below an impermeable cap rock layer, which prevents the gas from migrating upwards. Solubility trapping involves the dissolution of CO_2 into the pore water within the shale rock. Over time, the dissolved CO_2 can react with minerals in the rock to form stable carbonate minerals, a process known as mineral trapping. This ensures that the CO_2 is permanently sequestered and cannot escape back into the atmosphere.

Adsorption is a crucial mechanism for storing CO_2 in shale formations (Hazra et al., 2022). It is a process by which CO_2 molecules adhere to the surfaces of shale rocks through weak chemical bonds. Shale rocks, which contain significant amounts of organic matter and clay minerals components have high surface areas, which provide a lot of space for CO_2 molecules to adhere to. Upon injection into a shale formation, CO_2 molecules interact with the surfaces of the rock. These molecules are then attracted to and held on these surfaces through adsorption. This is similar to how a sponge soaks up water, but on a molecular level. Because the surfaces of the shale are so extensive, they can hold a large number of CO_2 molecules, significantly enhancing the storage capacity of the formation.

The efficiency of adsorption in shale formations depends on several factors. First, the composition of the shale plays a critical role. Shale rich in organic matter and certain types of clay minerals, like kaolinite, and illite is particularly effective at adsorbing CO_2. The organic matter in the shale has a high affinity for CO_2, meaning it can attract and hold more CO_2 molecules. Second, shale properties, such as porosity and permeability, are important. Higher porosity means more

surface area is available for adsorption. However, shale typically has low permeability, which helps trap the CO_2 in place once it is adsorbed.

Pressure and temperature conditions also significantly impact adsorption capacity. Higher pressure enhances adsorption, while lower temperature diminishes it. This is because higher pressure forces more CO_2 molecules into the rock, while lower temperatures slow down the movement of molecules, making them more likely to stick to the surfaces. Therefore, deep underground formations, where pressures are high and temperatures are relatively stable, are ideal for CO_2 sequestration. Additionally, the presence of other gases, like CH_4 or N_2, can influence CO_2 adsorption. For example, CO_2 may compete with methane for adsorption sites in the shale. In some cases, injecting CO_2 can even displace methane, which can then be captured and used as an energy source, a process known as enhanced gas recovery (Hazra et al., 2022).

The potential of shale formations for CO_2 sequestration is immense. According to estimates, the global capacity for CO_2 storage in shale formations could be in the range of hundreds to thousands of giga tonnes. This capacity, combined with the widespread availability of shale formations, makes them a promising option for large-scale CO_2 sequestration. In addition to shale formations, CO_2 can be sequestered in other geological formations such as coal beds, tight gas formations, and salt formations. Each of these has unique characteristics that make them suitable for CO_2 storage. Coal beds and tight gas formations are effective for CO_2 sequestration due to their unique properties. In coal beds, CO_2 is adsorbed onto coal particles during coal bed methane (CBM) recovery, displacing methane that can be used as clean energy while securely storing CO_2. Tight gas formations, with their low permeability, trap CO_2 via structural confinement and adsorption, enhancing natural gas recovery. Salt formations, like salt domes, provide secure storage with their impermeable properties, containing CO_2 in cavities and porous regions deep underground. These geological options offer varied approaches to long-term CO_2 storage, contributing to sustainable climate solutions.

An example of field implementation of CO_2 sequestration is the Sleipner field in the North Sea, Norway. Since 1996, the Sleipner project has injected CO_2 separated from natural gas into a saline aquifer situated 1,000 meters beneath the seabed (Boait et al., 2012). This initiative has effectively prevented around one million tons of CO_2 emissions each year, showcasing the practicality and efficiency of storing CO_2 in geological formations. Another notable example is the SACROC unit located in the Permian Basin of western Texas, USA. Geologically, the SACROC Unit comprises extensive deposits of limestone and thin shale beds (Vest, 1970). CO_2 injection has been employed at this site for over 35 years to enhance oil recovery. According to research by Han et al. (2010), analysis of production and injection data indicated that approximately 93 million metric tons of CO_2 were injected into the subsurface from 1972 to 2005. India is still in the early stages of implementing large-scale CO_2 sequestration projects. However, the country possesses significant potential for such initiatives, particularly given its diverse geological formations suitable for CO_2 storage.

Earth science, through innovative approaches like CO_2 sequestration in geological formations such as shale, coal beds, tight gas formations, and salt formations, offers promising solutions to mitigate global warming. These techniques leverage the natural storage capabilities of the Earth's subsurface to securely trap CO_2

Table 1. Comparative table showing the CO_2 sequestration potential of various geological formation

Geological formation	Sequestration potential ($GtCO_2$)	Key mechanisms
Shale	100-1,000	Adsorption, structural trapping
Coal Beds	40-200	Adsorption, coal bed methane recovery
Tight Sandstone	600-3,000	Structural trapping, solubility trapping
Saline Aquifers	1,000-10,000	Structural trapping, solubility trapping, mineral trapping
Depleted Oil & Gas Fields	120-1,100	Structural trapping, enhanced oil recovery

emissions, preventing their release into the atmosphere. By utilizing geological knowledge and advanced technologies, such as enhanced gas recovery and adsorption mechanisms, greenhouse gases emissions will be significantly reduced and advance towards a sustainable future. This integrated approach underscores the pivotal role of earth sciences in addressing climate change challenges on a global scale. Table 1 shows the CO2 sequestration potential of different geological formations:

References

- Bhattacharyya, R., Singh, K.K., Grover, R.B., Bhanja, K., Bhattacharyya, R., Singh, K.K. and Grover, R.B., 2022. Estimating minimum energy requirement for transitioning to a net-zero, developed India in 2070. *Curr. Sci*, *122*(5), pp.517-527.
- Boait, F.C., White, N.J., Bickle, M.J., Chadwick, R.A., Neufeld, J.A. and Huppert, H.E., 2012. Spatial and temporal evolution of injected CO_2 at the Sleipner Field, North Sea. *Journal of geophysical research: solid earth*, *117*(B3).
- Fletcher, M.S., Romano, A., Connor, S., Mariani, M. and Maezumi, S.Y., 2021. Catastrophic bushfires, indigenous fire knowledge and reframing science in Southeast Australia. *Fire*, *4*(3), p.61.
- Han, W.S., McPherson, B.J., Lichtner, P.C. and Wang, F.P., 2010. Evaluation of trapping mechanisms in geologic CO_2 sequestration: Case study of SACROC northern platform, a 35-year CO 2 injection site. *American Journal of Science*, *310*(4), pp.282-324.
- Hazra, B., Vishal, V., Sethi, C. and Chandra, D., 2022. Impact of supercritical CO_2 on shale reservoirs and its implication for CO_2 sequestration. *Energy & Fuels*, *36*(17), pp.9882-9903.
- Mukherjee, M. and Misra, S., 2018. A review of experimental research on Enhanced Coal Bed Methane (ECBM) recovery via CO_2 sequestration. *Earth-Science Reviews*, *179*, pp.392-410.
- Pattanaik, D.R., Mohapatra, M., Srivastava, A.K. and Kumar, A., 2017. Heat wave over India during summer 2015: an assessment of real time extended range forecast. *Meteorology and Atmospheric Physics*, *129*, pp.375-393.
- Vest Jr, E.L., 1970. Oil fields of Pennsylvanian-Permian horseshoe atoll, west Texas.

अगर हम अहम का त्याग कर अपनी बुद्धि व क्षमता को किसी भी नये मिशन में लगाएं तो हमारे सपने पूरे हो सकते है।

Health

The Hidden Dangers of Rapidly Ripened Bananas in India

Kartik Kota

Bananas are an integral part of the Indian diet, cherished across the nation for their flavour and nutritional benefits. It is a favourite and go to fruit for all the mothers for their young toddlers. However, the rush to meet market demand has led to widespread use of artificial ripening methods that compromise both the quality and safety of this popular fruit.

Understanding these methods and their implications is crucial for making informed choices as a consumer.

The Artificial Ripening Process Explained

Artificial ripening of bananas in India is predominantly done using calcium carbide, a chemical compound that accelerates the ripening process dramatically. Here is a closer look at how this process unfolds:

Application of Calcium Carbide: Small packets of calcium carbide are typically placed in boxes or baskets containing green bananas. The moisture in the air reacts with calcium carbide to release acetylene gas.

Release of Acetylene Gas: Acetylene functions similarly to ethylene, the natural plant hormone that triggers ripening. While ethylene promotes natural ripening over several days, acetylene speeds up this process to just a few hours or overnight.

Rapid Degradation: Under the influence of acetylene, the bananas' starches convert to sugars at an unnaturally fast rate. This not only alters the taste and texture of the bananas but can also leave behind residues of arsenic and phosphorus, impurities often found in commercially available calcium carbide.

Health Implications of Artificial Ripening

The use of chemical agents like calcium carbide is not without risks. Here are the potential health implications:

Immediate Effects: Short-term exposure can cause throat irritation and discomfort, abdominal pain, and severe cases of food poisoning.

Long-term Health Risks: Regular consumption of fruits ripened with calcium carbide may lead to chronic health issues, including neurological disorders and increased cancer risk due to the toxic impurities in the chemical.

To avoid the health risks associated with artificially ripened bananas, it is important to be able to identify them:

Uniform Coloration: Artificially ripened bananas often have a uniformly bright yellow color without the natural green tips or black patches.

Texture and Taste Anomalies: These bananas may exhibit a softer, mushier texture and lack the natural sweetness and aroma characteristic of naturally ripened bananas.

Yes, You Can Advocate for Safer Practices By

- **Choosing Organic:** Opting for bananas grown naturally, which guarantees they are free from artificial ripening agents.
- **Supporting Local and Natural Practices:** Buying from local farmers who use natural ripening methods can also ensure the quality and safety of the fruit.
- **Allowing Natural Ripening:** Purchasing slightly green or bananas with black spots and allowing them to ripen at home naturally can be another safe and effective approach.

Our Commitment to Natural and Organic Produce

At Earthy Tales Organics, we are committed to providing our customers with the highest quality bananas, ripened using safe and natural methods. We believe that the health and well-being of our customers come first, and this is reflected in our rigorous standards for organic produce. Our bananas are ripened using only natural

Flat G-3, Srinivas Apartment 8-3-977/
Subhash Nagar, Srinagar Colony, Hyderabad-500073
Email : transcreatin@rediffmail.com

methods, such as ambient temperature ripening and controlled ethylene exposure in ripening chambers.

When you buy our bananas, you're not just getting delicious fruit; you're investing in your health. Our naturally ripened bananas retain their full nutritional profile, ensuring you get all the vitamins and minerals nature intended.

By choosing our naturally ripened bananas, you are not only opting for a healthier and safer fruit but also supporting sustainable and environmentally friendly agricultural practices.

Natural ripening methods reduce the need for harmful chemicals, contributing to a cleaner and greener environment.

Buy Naturally Ripened Banana Today!

Earthy Tales Organics was founded in 2017 by Deepak Sabharwal, an ex-TATA, GE & PEPSI alumni who quit his corporate life of two decades after his mother was diagnosed with carcinoma, to bring about a change in how we grow and consume our food.

Earthy Tales is an award-winning, social impact organization which mentor's organic farmers to grow chemical-free food and home delivers the same in Pan India. They are championing the cause of Sustainability with both farmers and city communities, thereby also building a greener planet. Currently working closely with 500+ organic farmers, Earthy Tales is a global case study for positively impacting the city and farming communities and also a government-incubatead agri set-up in the Organic food space.

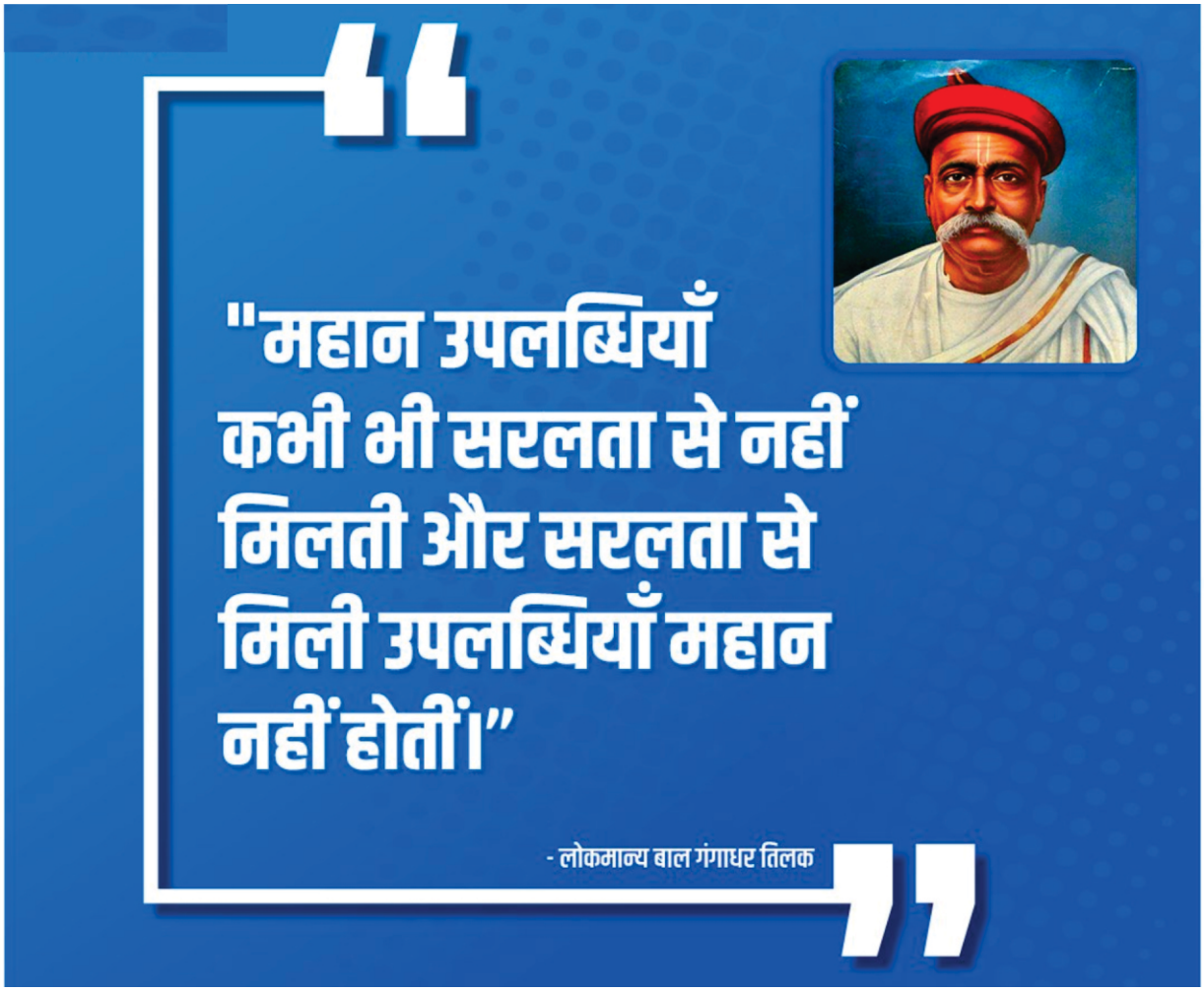

Environment

Peer Reviewed

Soil Pollution from Mining Activities: Impact on Living Organisms

Bodhisatwa Hazra[1,2], Prasenjeet Chakraborty[1,2] and Chinmay Sethi[1,2]*

Soil is a vital part of most ecosystems as it provides the nutrients needed for all living creatures. It supports plant growth, regulates temperature, and supports water and energy resources. Soil is a crucial natural resource, and keeping it healthy is important. However, human activities are disturbing the natural balance of soil. Soil pollution happens when harmful substances, like chemicals and waste, get into the soil. These pollutants can come from various sources, including mining, and make the soil unhealthy. Poor and unplanned use of soil leads to pollution, reduced biological activity, and changes in the soil's physical and chemical properties. This can harm plants, animals, and people who rely on the soil for food and living.

Soil pollution, primarily resulting from mining activities, has become a significant environmental concern globally. Mining processes, including the extraction, processing, and disposal of minerals and ores, release a variety of pollutants into the soil.

- **Excavation and Topsoil Removal:** A giant shovel, during mining scooping up topsoil—the nutrient-rich layer where plants thrive—gets scraped away. This removal disrupts the delicate balance of soil ecosystems.
- **Waste Management:** Waste from mining—tailings, ends up in heaps. These piles can leach heavy metals lead, zinc, and copper) into the soil. Soil as a sponge, soaking up these pollutants.
- **Atmospheric Deposition:** Air pollution occurs due to the tiny particles settling onto the ground. Mining activities release airborne pollutants that eventually land on the soil.

Sources and Types of Pollutants

Mining activities introduce

Fig. 1. Soil pollution due to various mining activities. A) represents the water and soil pollution, B) displays the coal dust deposition on the river sediments and water, C) shows the leaching of minerals from the coal and shale rocks to the coal-mine water, D) illustrates the abandoned mines areas become unhabitable and prone to subsidence and land slides

[1]CSIR-Central Institute of Mining and Fuel Research, Barwa Road Campus, 826015 Dhanbad, India
[2]Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR), Ghaziabad 201 002, India
*Corresponding Author Email : bodhisatwa.hazra@gmail.com

several types of pollutants into the soil, including heavy metals, acid mine drainage, and chemicals used in ore processing. Figure 1 depicts the different soil, sediment and water pollution in the mining areas.

- **Heavy Metals:** Mining operations release heavy metals such as lead (Pb), mercury (Hg), cadmium (Cd), arsenic (As), and nickel (Ni). These metals persist in the environment due to their non-degradable nature and can accumulate to toxic levels over time.
- **Acid Mine Drainage (AMD):** The exposure of sulfide minerals to air and water during mining leads to the formation of sulfuric acid. This acid leaches heavy metals from the surrounding rocks into the soil and water bodies, causing severe environmental damage.
- **Chemical Pollutants:** Chemicals used in ore processing, such as cyanide in gold mining, can contaminate the soil. Improper disposal or accidental spills of these chemicals can lead to long-term soil pollution.

Impact on Living Organisms

Plants: Plants can absorb and accumulate these toxic heavy metals such as cadmium and lead from contaminated soil, affecting their growth and development. This bioaccumulation not only affects plant health but also poses risks to herbivores and humans who consume these plants. High concentrations of these metals can inhibit photosynthesis, reduce nutrient uptake, and cause chlorosis and necrosis in plants (Nagajyoti et al., 2010).

Animals: Animals like burrowing rodents, insects, and creepy-crawlies—face a double curse. Their habitats get disrupted, and they ingest contaminated soil. Animals that graze on contaminated soil or plants can suffer from various health issues. For instance, high levels of mercury can cause neurological damage in wildlife (Scheuhammer et al., 2007). Contaminants bioaccumulate in the tissues of animals and biomagnify as they move up the food chain. This can lead to high concentrations of pollutants in top predators, causing reproductive and developmental problems.

Humans: Humans can be directly exposed to soil pollutants through dermal contact,

Table 1 : Heavy metals prone to carcinogenic risk (As, Cd, Cr, Ni, & Be) as suggested by United States Environmental Protection Agency and some other potentially toxic metals, risk of human health effects and impacted body organs

Heavy metals	Health effects	Impacted Body organs
Arsenic (As)	skin lesions, cardiovascular diseases, neurotoxicity, and an increased risk of cancer	skin, lungs, liver, kidneys, and bladder
Cadmium (Cd)	kidney damage, bone fragility, respiratory problems, and an increased risk of cancer	kidneys, liver, lungs, and bones
Chromium (Cr)	respiratory issues, skin rashes, and an increased risk of lung cancer	lungs, skin, kidneys, and liver
Nickel (Ni)	allergic reactions, respiratory issues, cardiovascular diseases, and an increased risk of cancer	skin, lungs, and kidneys
Beryllium (Be)	chronic beryllium disease (berylliosis), lung cancer, and acute beryllium disease	lungs and skin
Lead (Pb)	neurological damage, developmental delays in children, anaemia, and kidney damage	brain, kidneys, liver, and nervous system
Mercury (Hg)	neurological and developmental disorders, kidney damage, respiratory issues, and gastrointestinal problems.	brain, kidneys, lungs, and nervous system
Copper (Cu)	gastrointestinal distress, liver and kidney damage, and neurological disorders	liver, kidneys, brain, and gastrointestinal tract.
Uranium (U)	kidney damage, neurological disorders, cognitive impairment, radiation effects, cancer risk	kidneys, bones, and potentially other organs where uranium accumulates

inhalation of dust, or ingestion of contaminated soil, leading to various health issues such as skin disorders, respiratory problems, and gastrointestinal issues (Alloway, 2013). When crops absorb heavy metals, they end up on our plates. The consumption of crops and animals contaminated with heavy metals and other pollutants can lead to chronic health conditions, including cancer, kidney damage, and neurological disorders. Additionally, contaminated soil near mining areas affects nearby communities. It's like a toxic domino effect. Table 1 demonstrates the risk of excessive accumulation of potentially toxic metals on human body along with the effected body organs.

Microorganisms: An active community of earthworms, bacteria, fungi, and other soil organisms residing beneath the soil helps in breaking organic matter, cycle nutrients, and keep the soil healthy. But heavy metal contamination can reduce microbial diversity and alter microbial community structure, impairing soil functions. These pollutants can inhibit soil enzyme activities, affecting processes such as organic matter decomposition and nitrogen fixation (Chen et al., 2014).

Case Studies from India

Case Study 1: Uranium Mining in Jaduguda, Jharkhand

Jaduguda, located in the East Singhbhum district of Jharkhand, is known for its extensive uranium mining activities since the 1960s. The mining activities have raised significant environmental and health concerns due to the release of radioactive waste and heavy metals into the surrounding environment. Studies have shown elevated levels of radioactive isotopes, such as radon and radium, as well as heavy metals like arsenic and lead in the soil and water samples collected from the region (Kumar et al., 2013). The contamination has had severe repercussions on the local population and ecosystem. Residents living near the mining sites have reported higher incidences of health issues, including congenital deformities, cancer, and respiratory problems. The soil contamination has also adversely affected agriculture, leading to reduced crop yields and poor soil health.

Mitigation Efforts

UCIL has initiated several measures to mitigate the

Fig. 1A. A tailing pond located in Jaduguda. Waste produced during uranium processing is stored in a specially designed facility known as a tailing pond, where it is kept in the form of slurry. Residents express their grievances regarding the negative impacts of radiation from the tailing ponds and the contamination of water sources on their well-being

environmental impact, such as improving waste management practices and conducting regular monitoring of soil and water quality. However, the effectiveness of these measures remains a subject of debate among environmentalists and local communities.

Case Study 2: Iron Ore Mining in Bellary, Karnataka

Bellary, in Karnataka, is one of India's largest iron ore mining regions. The rapid expansion of mining activities, particularly during the mining boom in the early 2000s, led to extensive deforestation, reducing the land's agricultural productivity, soil erosion, and pollution. Affecting the agricultural productivity resulted to livelihood crisis for many residents as agriculture was a primary source of income. Moreover, the deposition of mining waste and overburden has further exacerbated the problem, causing soil compaction and loss of fertility. Contaminants from mining waste, including heavy metals, have leached into the soil, making it unsuitable for farming. The dust generated from mining operations has also settled on agricultural fields, impacting crop growth and quality.

Legal and Regulatory Actions

The environmental degradation in Bellary prompted legal interventions. In 2011, the Supreme Court of India imposed a ban on mining in the region to curb illegal mining practices and protect the environment. Subsequently, measures were taken to rehabilitate mined areas and regulate mining activities more strictly (Kumar, 2017).

Case Study 3: Bauxite Mining in Niyamgiri Hills, Odisha

Niyamgiri Hills in Odisha are rich in bauxite deposits. The proposed bauxite mining by Vedanta Resources has been a subject of intense conflict due to its environmental impact and the displacement of indigenous communities, primarily the Dongria Kondh tribe. Large tracts of forest land were cleared, leading to soil erosion and degradation and increased the risk of landslides. Moreover, the mining activities threaten the local water sources by causing siltation and contamination with heavy metals and chemicals used in ore processing (Padel & Das, 2010). The Dongria Kondh tribe relies heavily on the Niyamgiri Hills for their livelihood, practicing traditional agriculture and gathering forest products. The proposed mining posed a direct threat to their way of life and the biodiversity of the region. The hills are home to several endangered species of flora and fauna, which are at risk due to habitat destruction.

Community Resistance and Legal Battles

The strong resistance from the Dongria Kondh tribe, supported by various environmental and human rights organizations, led to a landmark decision by the Indian Supreme Court in 2013. The court upheld the rights of the indigenous communities, allowing them to decide the fate of the mining project. In subsequent village councils, the communities unanimously rejected the mining proposal, highlighting the importance of protecting their cultural and environmental heritage (Padel & Das, 2010).

Case Study 4: Coal Mining in Jharia, Jharkhand

Jharia, in the Dhanbad district of Jharkhand, is one of India's largest coal mining regions. The area is known for its extensive coal mines, which have been operational for over a century. However, the region is also infamous for its underground coal fires, which have been burning for decades, causing severe soil and air pollution. The burning coal releases toxic gases and heavy metals, which settle on the soil, contaminating it. The heat from the fires also alters the soil structure, making it unsuitable for vegetation. Additionally, the air pollution from the fires poses serious health risks to the local population, including respiratory diseases and skin disorders (Mishra, 2009). The pollution and land subsidence caused by coal fires have displaced thousands of families in Jharia. The contaminated soil and air have made the area uninhabitable, forcing residents to relocate. The loss of agricultural land has also impacted the livelihoods of many who depended on farming.

Mitigation and Rehabilitation Efforts

Efforts to extinguish the coal fires and rehabilitate the affected areas have been ongoing but with limited success. The Bharat Coking Coal Limited (BCCL) has undertaken several projects to control the fires and resettle displaced families. However, the scale of the problem and the complexity of underground fires make it a challenging task (Mishra, 2009).

Solutions and Hope

Soil pollution due to mining

activities is a pressing environmental issue that poses significant risks to living organisms. The case studies from India illustrate the severe environmental and social impacts of mining activities. Soil pollution due to heavy metals, acid mine drainage, and chemical pollutants has led to the degradation of ecosystems, affecting plants, animals, and human populations. Effective mitigation and rehabilitation measures are crucial to address these issues and protect the environment and public health. Phytoremediation involving plants, soil washing using water or chemical solutions, bioremediation utilizing microorganisms, proper containment, treatment and better waste management, minimal waste disposal, are essential to address this issue and restore contaminated soils. Continuous monitoring, strict regulatory frameworks by the Government, and active community participation are essential to ensure sustainable mining practices and minimize environmental damage. Continued research and policy measures are crucial to minimize the environmental impact of mining and protect ecosystem health.

References

- Alloway, B. J. (2013). Heavy Metals in Soils: Trace Metals and Metalloids in Soils and their Bioavailability. Springer Science & Business Media.
- Chen, Y., Luo, Y., Teng, Y., & Wang, J. (2014). Soil enzyme activities as affected by heavy metal pollution. Journal of Soil Science and Plant Nutrition, 14(4), 843-853.
- Kumar, A. (2017). Impact of Mining on Environment in Bellary. International Journal of Applied Environmental Sciences, 12(6), 1083-1091.
- Kumar, R., Prasad, S., Yadav, M., & Sahu, B. L. (2013). Assessment of the Radiological Impact of the Uranium Mining and Ore Processing at Jaduguda, India. Radiation Protection Dosimetry, 157(1), 43-50.
- Mishra, S. (2009). Environmental Impact of Coal Mining: A Case Study of Jharia Coal-Field. Journal of Environmental Research and Development, 4(2), 218-229.
- Nagajyoti, P. C., Lee, K. D., & Sreekanth, T. V. M. (2010). Heavy metals, occurrence and toxicity for plants: a review. Environmental Chemistry Letters, 8(3), 199-216.
- Padel, F., & Das, S. (2010). Out of This Earth: East India Adivasis and the Aluminium Cartel. Orient Blackswan.
- Scheuhammer, A. M., Meyer, M. W., Sandheinrich, M. B., & Murray, M. W. (2007). Effects of environmental methylmercury on the health of wild birds, mammals, and fish. Ambio: A Journal of the Human Environment, 36(1), 12-19.

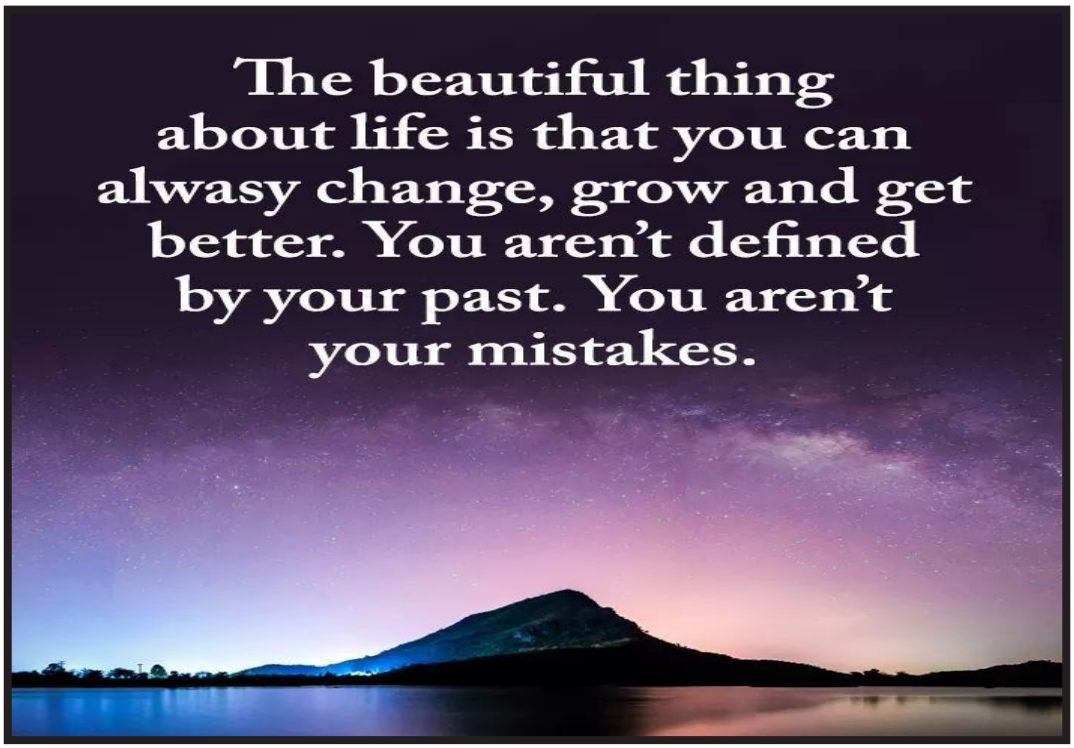

Technology

Peer Reviewed

Operational Research: During World War- II

Dr. Praphull Chhabra

In order to achieve better decision-making and efficiency, a wide range of problem-solving techniques and methods are developed and used in operational research (OR). These include mathematical optimization, simulation, data envelopment analysis, expert systems, data queuing theory, Markov decision processes, econometric methods, and other stochastic-process models. Almost all of these methods entail creating mathematical models in an effort to characterize the system.

OR has close linkages to computer science and analytics because to the computational and statistical aspects of most of these subjects. When presented with a novel problem, operational researchers must decide which of these approaches best fits the system's characteristics, the improvement objectives, and time and computational power constraints. Alternatively, they must devise a brand-new approach tailored to the particular situation at hand.

During World War II, the field of operational research as we know it today emerged. "A scientific method of providing executive departments with a quantitative basis for decisions regarding the operations under their control" was the definition of operational research during World War II. Nearly a thousand men and women worked in operational research in Britain during the Second World War. The British Army employed about 200 scientists in operational research. Throughout the war, Patrick Blackett worked for a number of different companies.

He founded a squad referred to by the name "Circus" shortly before the war while working for the Royal Aircraft Establishment, which assisted in reducing in the usual amount of anti-aircraft artillery shots necessary to bring apart a hostile aircraft from over 20,000 at the outset of the siege of Britain to 4,000 in 1941.

After having interned with RAF Coastal Command in 1941 and subsequently the Admiralty shortly before 1942, Blackett headed the RAE in 1941 to sign up the Navy. Along with numerous others who became pioneers in their respective domains, Blackett's team at Coastal Command's Operational Research Section included two future Nobel prize winners.

They carried out several important assessments that benefited the military effort. Convoys were first established by Britain as a way to lessen shipping losses, but while the idea of escorting merchant ships with warships was widely acknowledged, it was not certain if smaller or larger convoys were preferable. Smaller convoys can move more quickly since they follow the slowest convoy member's speed. It was also believed that German U-boats would find it more difficult to locate small convoys. Large convoys, on the other hand, might send out more warships to fend off an attacker.

The losses incurred by convoys were mostly determined by the quantity of escort vessels involved, not by the convoy's size, as demonstrated by Blackett's staff. They came to the conclusion that a few sizable convoys are easier to defend than numerous smaller ones. Operational research was typified by the "exchange rate" ratio of input to output.

The aircraft could be switched into more lucrative surveillance sectors by evaluating the number of times spent flying signed up by Allied aircraft with the amount of U-boat occurrences in a specific spot.

Rates of exchange assessments revealed "usefulness proportions" that are advantageous in strategizing. Several missions maintained the proportion of 60 explosives cultivated to feed each vessel sunk: German mines in British ports, British mines on German tracks, and US mines in Japanese paths.

Operational learning showed that lustrous enamel coating offered superior camouflage to feed night attackers than traditional dismal camouflage paint texture, and an effortless paint texture strengthened velocity through lessening skin contact.

It likewise demonstrated that wolf-packs of three American navy vessels were the ideal group size for enabling everyone to take on targets detected on their respective surveillance sites. These findings more than doubled the on-target bombard frequency of B-29s bombing Japan from the Marianas Islands.

In 1944, the Army Operational Research Group (AORG) of the Ministry of Supply (MoS) sent operational research units to land in Normandy, where they tracked British forces as they advanced across Europe. Among other things, they examined the efficiency of anti-tank gunfire, aerial bombardment, and artillery.

Professor, Department of Mathematics and Statistics
University of Engineering and Management, Jaipur
Email : praphull.chhabra@uem.edu.in

Health

Navigating Legal and Ethical Challenges in Organ Transplantation

*Sarthak Chandra[a], Pradeep Kumar[a], Abhijit Prasad Misra[b] and Sunil Babu Gosipatala[b]**

Abstract

Organ transplantation, is a medical procedure where a damaged or failing organ of an individual is replaced with a healthy organ from a donor. It is a lifesaving intervention used to treat severe organ failure(s), such as that of the heart, liver, kidneys or lungs or any organ of the body. Advancements in transplantation technology had significantly improved survival rates, however equally the procedure raises ethical, medical, and legal issues. These include ensuring informed consent of the donors and preventing the illegal practices like organ trafficking. A robust legal framework and international cooperation are essential to ensure ethical and legal practices and thereby addressing the growing demand for organ transplantation. In this paper we reviewed key legislativespertaining to transplantation in India such as "Transplantation of Human Organs and Tissues Act (THOTA)", and analysed landmark cases pertaining to legal breaches, safeguarding informed consent, and protecting vulnerable groups from exploitation. We have also discussed the international legal frameworks, including the National Organ Transplant Act (NOTA) in the United States and the Human Tissue Act in the United Kingdom, highlighting global initiatives to uphold ethical standards in organ transplantation. Comparative analysis reveals shared goals and challenges across jurisdictions, particularly in preventing organ trafficking and ensuring equitable organ allocation.

Keywords:Organ transplantation/ trafficking; Donor consent; Ethical issues; Legal framework; THOTA; NOTA; Human Tissue Act.

Introduction

Organ transplantation is one of the most significant medical advancements of the 20th century, offering a new lease on life to patients with end-stage organ failure. While the clinical success of organ transplantation has been revolutionary, the legal landscape surrounding it is complex and continually evolving. The legal issues related to organ transplantation encompass a broad spectrum, including ethical considerations, regulatory frameworks, donor consent, allocation policies, and the prevention of organ trafficking. The legal framework for organ transplantation is designed to ensure that the process is carried out ethically and transparently, protecting both donors and recipients. In many countries, including India, the Transplantation of Human Organs and Tissues Act (THOTA), 1994, and its subsequent amendments, provide the regulatory foundation for organ transplantation practices. These laws outline the processes for organ donation, transplantation, and penalize illegal practices such as organ trafficking and commercialization.[1]

One of the primary legal concerns in organ transplantation is the issue of donor consent. The principle of informed consent is crucial, ensuring that donors are fully aware of the risks and implications of their decision. This becomes particularly challenging in the case of deceased donors, where consent must be obtained from family members. The legal system must balance respect for the wishes of the deceased with the urgent need for organs.[2]On the other hand, The dark side of organ transplantation involves organ trafficking and illegal transplantation practices. This black market for organs exploits vulnerable populations, leading to severe human rights violations. Legal measures must be stringent and effectively enforced to combat these illegal activities. International cooperation and stringent penalties are essential components of the legal strategy to eradicate organ trafficking.[3]

The legal framework governing organ transplantation varies by country but generally addresses

[a]Department of Law, Babasaheb Bhimrao Ambedkar University, Lucknow-226025
[b]Department of Biotechnology, Babasaheb Bhimrao Ambedkar University, Lucknow-226025
*Address for correspondence : Dr Sunil Babu Gosipatala, Associate Professor, Department of Biotechnology, Babasaheb Bhimrao Ambedkar University, Lucknow-226025
email : sunil_gos@yahoo.com

[1]Transplantation of Human Organs and Tissues Act, 1994, and its subsequent amendments.
[2]Informed Consent in Organ Transplantation. Journal of Medical Ethics.
[3]Combating Organ Trafficking. Human Rights Law Journal.

concerns such as donor consent, organ allocation, and trafficking. Consent is perhaps the most critical legal issue, involving both living and deceased donors. Laws must ensure that the consent is informed and voluntary, without coercion. Further, allocation of organs must follow equitable guidelines to avoid discrimination or unfair advantage. Internationally, regulations like the World Health Organization's (WHO) guiding principles seek to prevent organ trafficking and ensure ethical practices.[4]

I. What is Organ Transplantation and when it got Started?

Organ transplantation is a medical procedure that involves replacing a diseased or failing organ with a healthy organ from a donor. This life-saving technique is used to treat various conditions, such as end-stage organ failure, congenital defects, and severe injuries. The most commonly transplanted organs include the kidneys, liver, heart, lungs, pancreas, and intestines. Transplantation can either be from a living donor, where organs like a kidney or a part of the liver can be donated, or from a deceased donor, whose organs can be harvested and transplanted to recipients in need. The process of organ transplantation involves multiple stages, including donor selection, compatibility testing, surgical removal of the donor organ, preservation of the organ, and surgical implantation into the recipient. The success of transplantation depends on several factors, such as the match between donor and recipient, the health of the donor organ, and the recipient's overall health condition.

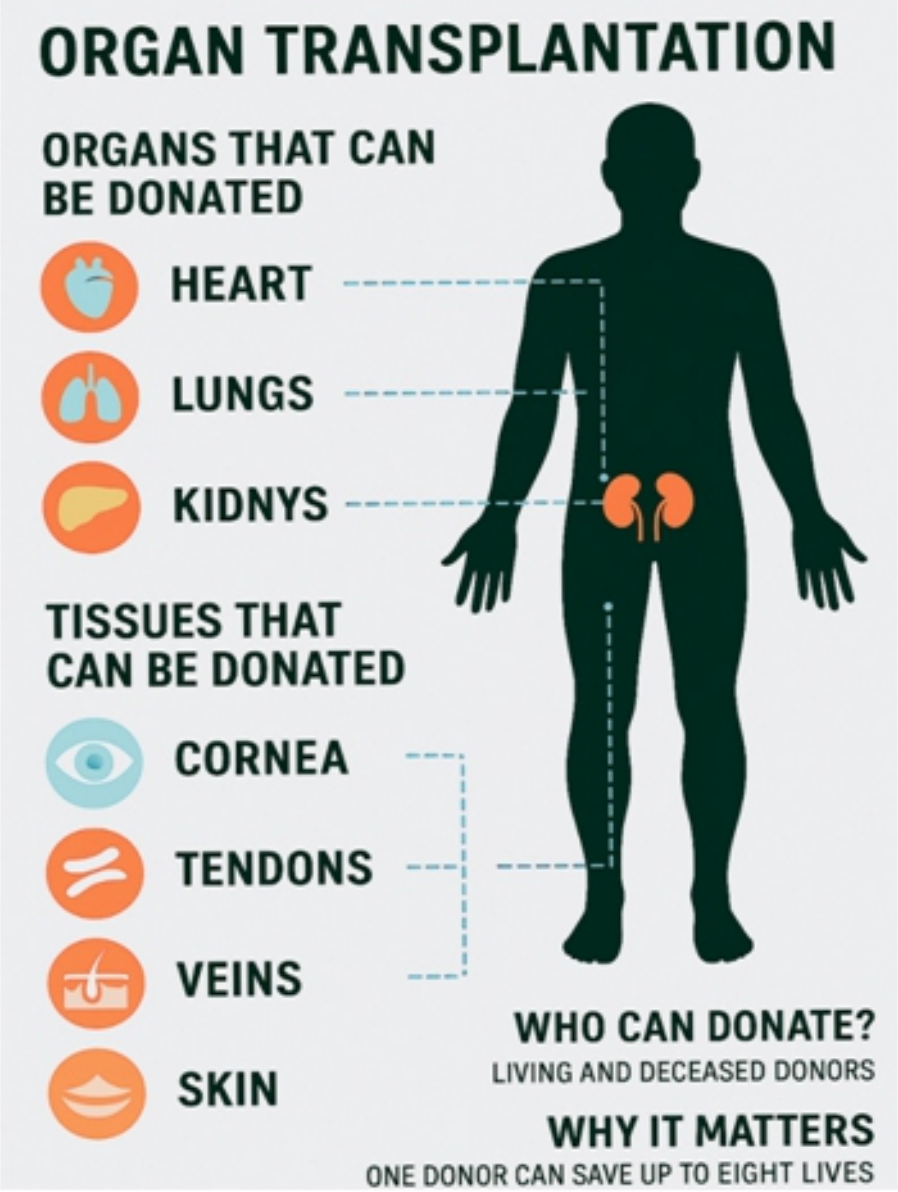

Figure: Diagram illustrating human organs and tissues that can be donated for transplantation.

Legal and ethical considerations play a significant role in organ transplantation. Regulatory frameworks ensure that the process is conducted ethically, protecting the rights of both donors and recipients. Issues such as informed consent, organ allocation, and prevention of organ trafficking are critical components of the legal landscape surrounding organ transplantation.[5]

When it got started?

The history of organ transplantation dates back to ancient times when attempts were made to replace damaged tissues with animal parts. However, modern organ transplantation began in the 20th century with significant scientific advancements. The first

[4]World Health Organization. (2010). Guiding principles on human cell, tissue, and organ transplantation. WHO.
[5]Informed Consent in Organ Transplantation. Journal of Medical Ethics.

successful kidney transplant was performed in 1954 by Dr. Joseph Murray in the United States. This ground breaking surgery involved identical twins, where one twin donated a kidney to the other, demonstrating the feasibility of organ transplantation and laying the foundation for future advancements.[6] Following this success, other organ transplants were gradually developed. In 1963, the first successful liver transplant was performed by Dr. Thomas Starzl, and in 1967, Dr. Christiaan

Barnard performed the first successful heart transplant in South Africa. These pioneering surgeries demonstrated the potential of organ transplantation to save lives and improve the quality of life for patients with organ failure.[7]The development of immunosuppressive drugs, such as cyclosporine in the 1980s, marked a significant milestone in transplantation medicine. These drugs helped prevent the recipient's immune system from rejecting the transplanted organ, significantly improving the success rates of organ transplants.[8]

The development of Immunosuppressive drugs, such as cyclosporine in the 1980s, marked a significant milestone in transplantation medicine. These drugs helped prevent the recipient's immune system from rejecting the transplanted organ, significantly improving the success rates of organ transplants [^5]. Today, organ transplantation is a well-established medical procedure, with ongoing research and technological advancements continually enhancing its effectiveness and expanding its possibilities.[9]

II. Organ Transplantation: Legal Perspective

Organ transplantation is a complex medical procedure that involves significant legal considerations to ensure ethical practices and protect the rights of both donors and recipients. The legal framework for organ transplantation varies across countries, but common themes include the regulation of organ donation, consent, allocation, and the prevention of illegal activities such as organ trafficking. In India, the Transplantation of Human Organs and Tissues Act (THOTA), 1994, and its subsequent amendments provide the legal foundation for organ transplantation.[10]The Act regulates the removal, storage, and transplantation of human organs and tissues for therapeutic purposes.[11]It prohibits commercial dealings in human organs and mandates that organ donation must be voluntary and without any monetary benefit to the donor.[12]The Act also establishes regulatory bodies such as the Authorization Committees and the Appropriate Authority to oversee the transplantation process and ensure compliance with legal requirements.

One of the primary legal issues in organ transplantation is the principle of informed consent. Donors must be fully aware of the risks and implications of their decision, and consent must be obtained from family members in the case of deceased donors. The legal system must balance respect for the wishes of the deceased with the urgent need for organs.[13]

Allocation of organs is another critical legal issue. The criteria for allocating organs must be transparent and based on medical urgency and compatibility rather than social status or financial capacity1. Legal frameworks aim to establish fair and equitable systems to prioritize patients in need while preventing any form of bias or favoritism.[14]Organ trafficking and illegal transplantation practices are significant concerns that require stringent legal measures. The black market for organs exploits vulnerable populations, leading to severe human rights violations1. International cooperation and stringent penalties are essential components of the legal strategy to combat organ trafficking. Advancements in medical technology, such as xenotransplantation (transplantation of animal organs to humans) and bioengineered organs, present new legal challenges. These innovations

[6] Dr. Joseph Murray 's First Successful Kidney Transplant. New England Journal of Medicine.
[7] History of Liver and Heart Transplants. Journal of Surgery.
[8] Development of Immunosuppressive Drugs. Transplantation Journal.
[9] Advancements in Organ Transplantation. International Journal of Medical Sciences.
[10] https://blog.ipleaders.in/organ-transplantation-laws-in-india-overview-and-analysis/ visited on 25 October, 2024
[11] The Transplantation of Human Organs Act, 1994: An In-Depth Analysis. https://www.vkeel.com/legal-blog/the-transplantation-of-human-organs-act-1994-an-in-depth-analysis visited on 26 October,2024
[12] https://www.legalserviceindia.com/legal/article-10827-regulation-of-organ-donation-addressing-ethical-legal-and-practical-considerations-in-india-and-globally.html visited on 26 October,2024

require updates to existing legal frameworks to address safety, ethical, and regulatory concerns.[15]

In conclusion, the legal issues surrounding organ transplantation are multifaceted and require continuous adaptation to keep pace with medical advancements and societal changes. Robust legal frameworks are essential to ensure ethical practices, protect donor and recipient rights, and prevent exploitation.

III. Laws Related to Organ Transplantation:

India has a comprehensive legal framework governing organ transplantation, primarily encapsulated in the Transplantation of Human Organs and Tissues Act, 1994 (THOTA). This Act was introduced to regulate the removal, storage, and transplantation of human organs and tissues for therapeutic purposes and to prevent commercial dealings in human organs.[16]The Act was amended in 2011 and 2014 to address emerging challenges and to expand its scope.

The THOTA outlines the procedures for organ donation, Including the definition of brain death as a form of death, allowing transplantation from both living and deceased donors. It establishes regulatory bodies such as the Appropriate Authority (AA), Advisory Committee, and Authorization Committee (AC) to oversee the transplantation process and ensure compliance with legal requirements. The Act also mandates the certification of brain death by a panel of medical experts.[17]The Act prohibits commercial dealings in human organs and tissues, ensuring that organ donation is voluntary and without any monetary benefit to the donor. It also emphasizes the need for informed consent from living donors and their families in the case of deceased donors3. The legal framework aims to protect the rights and welfare of both donors and recipients, ensuring that the transplantation process is conducted ethically and transparently.[18]

Some Elements of THOTA

- A competent authority is established in each state to monitor and regulate transplant activities.
- The act mandates the registration of hospitals conducting transplants and creates the National Organ and Tissue Transplant Organization (NOTTO) for national organ-sharing.
- Consent for organ donation can be obtained from the donor in cases of brain death, and the act also provides for presumed consent for organ retrieval in certain cases of natural death.
- Commercial dealings in organs are prohibited, and violators may face severe penalties, including imprisonment and fine.

2. In the U.S., organ transplantation is regulated by the National Organ Transplant Act (NOTA), 1984. This act prohibits the sale of human organs and establishes the Organ Procurement and Transplantation Network (OPTN) to ensure equitable organ allocation. Key provisions include:[19]
   - Prohibiting the purchase or sale of organs for transplantation, which is punishable by fines or imprisonment.[20]
   - Establishing a national registry to coordinate organ allocation and ensure it is done based on medical criteria rather than financial or social status.[21]
   - The Health Resources and Services Administration (HRSA) oversees transplant programs and ensures that organ allocation is done equitably.[22]
3. The legal framework for organ transplantation in the UK is primarily governed by

[13]https://blog.ipleaders.in/organ-transplantation-laws-in-india-overview-and-analysis/ visited on 27 October, 2024
[14]*ibid*
[15]*ibid*
[16] "Laws Related to Organ Transplantation and Donation: A Detailed Examination," Bhatt and Joshi Associates, accessed November 05, 2024, https://bhattandjoshiassociates.com/laws-related-to-organ-transplantation-and-donation-a-detailed-examination/.
[17]"Organ Transplantation in India | Organ Transplant Governing Laws," Organ India, accessed November 05, 2024, https://www.organindia.org/organ-transplant-laws-made-easy/
[18]Rachit Garg, "Organ Transplantation laws in India: Overview and Analysis," iPleaders Blog, accessed November 05, 2024, https://blog.ipleaders.in/organ-transplantation-laws-in-india-overview-and-analysis/.
[19]National Organ Transplant Act, Pub. L. 98-507, 98 Stat. 2339 (1984).
[20] ibid
[21] ibid
[22] ibid

the Human Tissue Act 2004. It sets forth guidelines for consent and prohibits organ trafficking. Important elements include:[23]

- Consent is the foundational principle, and organs can only be retrieved if proper consent is obtained from the donor or their family.[24]
- The act criminalizes the sale of organs and introduces penalties for violations.[25]
- The NHS Blood and Transplant organization manages the allocation and transplantation process to ensure fair distribution of organs.[26]

4. On a global scale, organizations like the World Health Organization (WHO) have developed guidelines for ethical organ transplantation. The WHO Guiding Principles on Human Cell, Tissue, and Organ Transplantation emphasize:[27]

- The necessity of informed consent from living donors and the importance of preventing any form of exploitation or coercion.[28]
- Transparency in allocation to ensure that organs are distributed fairly and not based on financial gain.[29]
- A prohibition against commercial organ trading and the trafficking of human organs.[30]

Punishments

1. As per Section 18 of this Act, any person who is responsible for the removal of a human organ/tissue with the authority of doing so can be punished with imprisonment which can extend to 10 years and with fine which can extend to Rs. 20 lakhs. In case that person is a medical professional, his name will be reported by the AA to the State Medical Council to take appropriate action including removing his name from the register of the council for 3 years for the first offense and if he/she commits an offense subsequently, then remove it permanently.[31]
2. As per the Section 19, if any person involves himself/herself in the commercial dealing of human organs then such person can be punished with imprisonment for a term not less than 5 years but can extend to 10 years and will also be liable for a fine which will not be less than Rs. 20 lakhs but can extend to Rs. 1 crore.[32]
3. As per Section 20. If any person violates any other provision of this act, he/she can be punished with imprisonment for a term which can extend to 5 years or with fine which may extend to Rs.20 lakhs.[33]

II. Current Status In India

Organ transplantation in India has seen significant progress over the years, but challenges remain. As of 2023, India performs the second largest number of transplants globally, following the United States. However, the donation rate remains low, with only 0.65 donors per million population compared to countries like Spain, which has a rate of 35.1 donors per million population.[34]

The demand for organ transplants far exceeds the supply, with over 300,000 patients on the waiting list. The shortage of deceased donors is a critical issue, with only around 0.01 percent of people in India donating their organs after death1. Efforts to increase deceased organ donations have been ongoing, but progress has been slow. Living donors constitute the majority of organ donations in India, accounting for 85% of all donations. Kidney transplants are the most common, but there is still a significant gap between demand

[23] Human Tissue Act 2004, c. 30.
[24] ibid
[25] ibid
[26] ibid
[27] World Health Organization. (2010). Guiding principles on human cell, tissue, and organ transplantation. WHO.
[28] ibid
[29] ibid
[30] ibid
[31] https://blog.ipleaders.in/organ-transplantation-laws-in-india-overview-and-analysis/ visited on 06 November, 2024
[32] ibid
[33] ibid
[34] "Organ Donation in India," Drishti IAS, accessed November 06, 2024, https://www.drishtiias.com/daily-updates/daily-news-analysis/organ donation-in-india. : "Nearly 50,000 people waiting for organ replacement in India, says Centre," New Indian Express, accessed November 07, 2024

and supply3. The government has taken several steps to address these challenges, including modifying the National Organ Transplantation Guidelines to allow individuals above 65 years of age to receive organs from deceased donors and removing the domicile requirement for registration.

Despite these efforts, regional disparities in organ donation rates persist, with states like Telangana, Tamil Nadu, Karnataka, Gujarat, and Maharashtra reporting the highest number of deceased organ donors. Public awareness and education about organ donation remain crucial to increasing donation rates and saving lives.[35]

V. Legal Cases:

Some Cases related to the "The Transplantation of Human Organs and Tissues Act, 1994" are as follows:

1. Sumedico Corporation v. Apollo Hospitals Enterprises Ltd. (2003)[36]

In this case, the court addressed the issue of medical negligence in the context of organ transplantation under the THOTA framework. The plaintiff alleged negligence in the removal and transplantation of an organ without following proper procedural requirements outlined in the act. The court emphasized the importance of obtaining proper consent and following prescribed medical guidelines to avoid malpractice. This case highlighted the role of THOTA in safeguarding both donor and recipient rights in medical procedures.

2. Kartikeya v. Union of India (2013)[37]

This case challenged the constitutionality of certain provisions of THOTA, specifically regarding the definition of "near relative" under the act. The petitioner argued that the restricted definition of near relatives for organ donation was unconstitutional, as it limited the donor pool. The court upheld the act's provisions, noting that the restrictions were intended to prevent the commercialization of organ donation and protect vulnerable individuals from exploitation.

3. Manoj Kumar v. State of Maharashtra (2009)[38]

This case involved an illegal organ trade racket that violated THOTA's provisions. The accused were charged with conducting illegal organ transplants, including the purchase of organs from vulnerable individuals. The court convicted the accused under THOTA, stressing that the act's provisions must be strictly enforced to prevent the commercialization of organ transplants. The court called for stricter enforcement of the act's provisions to curb illegal practices.

4. Ruby Hall Clinic v. Medical Council of India (2011)[39]

This case dealt with the hospital's responsibility in following the procedural requirements set out by THOTA. Ruby Hall Clinic was charged with failing to comply with THOTA's rules on verifying the legitimacy of organ donors and the authenticity of their consent. The court held that hospitals are required to exercise due diligence and adhere strictly to THOTA's guidelines to prevent unauthorized transplants and potential exploitation.

5. K S Puttaswamy v. Union of India (2017)[40]

Although this case is more famous for establishing the right to privacy as a fundamental right, it also impacted organ donation laws. The court discussed how the privacy of donors and recipients should be protected under the Transplantation of Human Organs and Tissues Act. It emphasized that while THOTA's primary focus is on preventing commercial organ trade, privacy concerns for donors must also be respected in organ transplantation practices.

Conclusion

Organ transplantation is one of the most significant advancements in modern medicine, offering hope and life to individuals suffering from end-stage organ failure. However, the complexities surrounding this procedure

[35]"Organ Donation Landscape in India: Challenges, Governmental Efforts, and Future Directions," iJournals, accessed November 07, 2024, https://ijournals.in/wp-content/uploads/2024/01/1.IJSRC-111203-Syeira.pdf.
[36]Sumedico Corporation v. Apollo Hospitals Enterprises Ltd., AIR 2003 SC 346.
[37]Kartikeya v. Union of India, 2013 SCC OnLine Del 1096.
[38] Manoj Kumar v. State of Maharashtra, 2009 Cri LJ 1359 (Bom).
[39] Ruby Hall Clinic v. Medical Council of India, 2011 SCC OnLineBom 2105.
[40] K S Puttaswamy v. Union of India, (2017) 10 SCC 1.

Table : Landmark Legal Cases in Organ Transplantation

Case	Year	KeyIssuesAddressed	LegalSignificance
Sumedico Corporation v. ApolloHospitals	2003	Medical negligence, procedural requirements	Emphasized importance of consent andguidelines
ManojKumarv.Stateof Maharashtra	2009	Illegal organ trade	Emphasizedstrict enforcementof THOTA
RubyHallClinicv.Medical Councilof India	2011	Hospitalresponsibility	Established due diligence requirement
Kartikeya v. Union of India	2013	Definition of "near relative"	Upheld restrictions to prevent commercialization
K.S.Puttaswamy v. Union of India	2017	Privacyconsiderations	Impact on donor/recipient privacy protection

extend beyond medical science, encompassing critical legal and ethical dimensions. The laws governing organ transplantation aim to safeguard both donors and recipients while ensuring fair and equitable access to life-saving organs. These laws, while well-intentioned, often struggle to address the growing global demand for organs, which in turn fuels illegal organ trafficking and exploitation. One of the core legal challenges in organ transplantation is the issue of consent. Ensuring that donors, whether living or deceased, have given informed and voluntary consent is paramount to maintaining ethical standards. This becomes even more critical in cases involving deceased donors, where family consent or presumed consent models come into play. Different countries have adopted varied approaches, from explicit consent laws to presumed consent frameworks, with the latter often sparking ethical debates about autonomy and the rights of the deceased. Additionally, organ trafficking remains a global issue, exacerbated by poverty and weak regulatory frameworks in some regions. While international treaties and national laws prohibit the sale and trafficking of human organs, the black market continues to thrive, exploiting vulnerable populations and undermining ethical medical practices.

In summary, while organ transplantation has made significant strides, there is still much work to be done to address the various legal and ethical issues that arise. Despite the existence of robust legal mechanisms, the study identifies persistent enforcement gaps and systemic disparities in organ distribution. It emphasizes the need for improved regulatory oversight and international cooperation to address these issues and promote ethical practices in organ transplantation. A robust and adaptable legal framework, combined with public education and technological innovation, is essential to overcoming these challenges. By continuing to evolve and improve the legal and ethical landscape, we can ensure that organ transplantation remains a safe, fair, and lifesaving procedure for those in need. This piece of work contribute to the broader discourse on enhancing legal and policy measures to ensure fairness and integrity in this critical medical field.

Agriculture

Traditional Knowledge for Crop Cultivation in India: Need for Mainstreaming the Concept

Dharmendra Dugaya

Abstract

Over the past century, rapid global changes in rural environments have occurred. The modernization has increased abundant capital resources, increased energy consumption, technological innovations, and cultural factors have fueled agricultural growth in industrial countries. This resulted in increasing agricultural output which has been transferred to developing countries. However, even in the rapid change in modernization, number of traditional agricultural practices and knowledge systems still exist. These systems exhibit important element of stability and embeddedness because these are well adapted to the environment with realization of local resources and tend to optimize utilization of natural resources.

Introduction

The entire crop management system that is currently in place needs to be reevaluated in light of the numerous effects of climate change. It is best to discourage actions that have an impact on the climate. India's ancient agricultural practices promote the use of manure, weeding, and other practices that align with cosmic events. Large-scale implementation of traditional practices could aid in adaptation to the effects of climate change. A small contribution in harmony with nature would make a bigger difference. Encouragement of composting methods using leftovers from other and agricultural wastes would also help to improve soil fertility, which would ultimately increase agricultural output.

Traditionally, the crop cultiva-tion practices in India perfectly blended with the nature and natural settings. Many a times the traditional way of crop cultivation is simple, robust but hard to believe by the modern society and sometimes considered obsolete by the agriculture profession. Because the traditional way of crop cultivation observes some specific day/period for not initiating/ undertaking the agricultural activities which may be favorable for environment such as not ploughing agri-cultural fields on *Amawasya*.

The strategy for stable agriculture must include the efficient crop production practices coupled with the no or minimum activities that adversely affect the climate. In India this could be started through incorporating the good traditional practices prevailing for crop cultivation. This can be done through documentation of traditional practices.

Documentation of traditional knowledge

The traditional knowledge of crop cultivation practices immensely followed in earlier days. The traditional crop cultivation practices with all the aspects of farming including cosmic understanding have not been documented holistically. It is implicit that even in the rapid changes and commercialization of agriculture, number of traditional agricultural practices and knowledge systems still exists. Traditional practices exhibit important element of stability because these are well adapted to the environment and on *prima-facie* in consonance with the climate. In order to develop crop cultivation package of practices, the recognition and documentation of traditional practices are imperative for stable agriculture. This could be ascertained by the experimental trails to come to a conclusion of ideal situation for crop cultiva-tion.

Conservation or no- tillage in practice

Tillage is used to remove weeds, shape the soil into rows for crop plants and furrows for irrigation. This leads to unfavorable effects, like soil compaction; loss of organic matter; degradation of soil aggregates; death or disruption of soil microbes and other organisms including mycorrhiza, arthropods, and earthworms (Preston Sullivan, 2004). The conservation or no till improves water infiltration, reduces soil erosion. The most beneficial effect of no-tillage is improvement in soil biological fertility, making soils more resilient. It is revealed by the farmers of Harrai block of Chhidwara that the ploughing or soil working in agricultural fields are not undertaken on *Amawasya*. On the other hands the soil working, ploughing are undertaken on near days or on Poornima. ***The traditional practice***

Research Assistant, Indian Institute of Forest Management (IIFM), Nehru Nagar, Bhopal 462003
Email : dugayad@iifm.ac.in/dugayad@iifmbhopal,edu.in

Weeding operation just one day before Poornima in Harrai block Chhindwara (Poornima was upto 7:30 am on 2 July 2015)

of not ploughing agricultural field on *Amawasya* could be considered as ***adaptation strategy for maintaining soil moisture and enhancing biological activity in agricultural field***. This could be further investigated at the research stations and Krishi Vigyan Kendras (KVKs) at State level so that a firm scientific base could be built based on the traditional practices in addition to adaptation of modern technologies of crop cultivation.

The development of package of practices of crop cultivation with accommodation of traditional practical knowledge needs to be validated by the scientific studies or by simple experimental trials and also examine whether there have been any deviations in the schedule vis-à-vis the climate change.

Climate Change scenario

It is established that the changing climate is playing a crucial role in crop cultivation practices. The temperature during the *Nav Tapa* is showing decreasing trend, which is considered as unfavorable condition for crop cultivation. Similarly, the high relative humidity in the month of September – October in present year from the calculated average relative humidity from the historic period. This requires adaptation lies with the cosmic knowledge and vast experience of Indian farmers. It was observed that the farmers follows cosmic happenings, although it is in pockets only.

The farmers shifted their crop choice from Soyabean to Maize a C3 to C4 plant completely from the year 2013 in Harrai block of Chhindwara region this could be attributed to the traditional knowledge of farmers in climate change scenario. This could be considered as adaptation strategy to cope-up with climate change.

In the climate change scenario it becomes more imperative to observe and follow the traditional wisdom, cosmic happenings and coupled with scientific knowledge of crop cultivation for stable agriculture.

Crop harvesting and storage

During the waning (*Krishna Paksha*) of the moon, the earth inhales and the sap primarily goes down toward the roots. The waning moon period would be an ideal condition for crop harvesting. The farmers adopt a strategy for seed sowing to harvesting in such a way so that the crop maturity time would coincide with the period of waning moon. The adaptation of crop harvesting period based on the moon phases would not only produce good quality seeds but the harvested crop may be prevented from the attack of *Ghun* (weevil) as revealed by the traditional farmers.

The tradition of storage of harvested crop in earthen container needs to be encouraged as grain containers made out of soil may be effective option, then the other grain containers made-up of Tin or other metal, for heat transformation and creating conditions for adversely affecting the climate.

Enhancing awareness

The traditional crop cultivation practices embedded with cosmic happenings would be an added advantage in the era of climate change consequences. The documentation and popularization of best practices in harmony with nature may result in stabilization of agriculture. For the purpose of enhancement of awareness, adequate publicity and extension activities have to be undertaken and these activities have to be designed according to the specific target groups. Efficacy of these measures would be measured by the extent to which contribution from various stakeholders gets enhanced.

Experimentation for promoting the best traditional practices of crop cultivation

The farmers observe the climate and adopt some robust techniques like selection of crop if the area receives less rainfall in monsoon, they prefer to grow Gram instead of Wheat in rabi season; likewise change of crop from C3 to C4 plants i.e. Soyabean to Maize; soil working during *Poornima*. If these simple but robust decisions could be substantiated with the scientific experimentation or trial would facilitate in tackling the climate change consequences to a greater

Vindi – Grain container in Saloos village of Vidisha District in Madhya Pradesh

extent. This could be further investigated at the agricultural universities; research stations and Krishi Vigyan Kendras (KVKs) so that a firm scientific base could be built based on the traditional practices in addition to adaptation of modern technologies of crop cultivation.

Conclusion

The crop cultivation in India is primarily based on the traditional knowledge passed on from generation to generations. The knowledge of cultivating crops with age old practices prevailed quite before the modern theory and practice of Agriculture. The basic component of any country's knowledge system is its traditional knowledge. It encompasses the skills, experiences and insights of people, applied to maintain or improve their livelihoods through adoption and adaptation of such knowledge practices.

The traditional knowledge systems are based on wisdom, experience, often tested over a long period of use, adapted to local culture and environment, dynamic, emphasize on minimizing the risks rather than maximizing the profits. The documentation of various stages of practice based traditional knowledge would help develop package of practices of cultivation of agriculture crop. It is imperative to document the traditional knowledge of crop cultivation and establish a correlation that the climate change has its effect on shifting/deviation of agriculture activities. In India, the traditional agriculturists have established practice based linkages with astrological events for deciding various agricultural activities.

Climate change and climate variability as a phenomenon is affecting all land based activities including agriculture. The current scientific exploration in to climate change has immense evidences and research expressions. This study aims to document the peoples' utlity perspective (practical knowledge) and develop a language for communication that accommodates the age-old traditional crop cultivation practices in consonance with cosmic happenings. The attempt would also be made to record the crop farming practice and strive to develop scientific base to understand the effects of climate change on agriculture.

Limitations of the study

The research projects fairly touched on the fundamental premises of crop cultivation activities that formed the basis for evolving crop cultivation practices of present form. The tools and techniques for crop cultivation may change with the advancement of technology but the development of crop cultivation techniques and traditional practices would remain sacrosanct. It seems that the erratic rainfall and temperature variations disturbed the farmers confidence for undertaking the crop cultivation particularly from the last five years. The best practices or the crop cultivation practices in consonance with the nature has disturbed drastically. The traditional farming practices are sinking day by day. it is high time to restore the confidence of the farmers and practice the age-old tradition for crop farming would not only stable the agriculture but also contribute in reducing the climate change impacts. The traditional practices need to be tested in filed condition to describe the best package of practice of crop cultivation.

The establishment of climate variability and climate change requires series of data particularly the meteorological data. The meteorological data were sought from the India Meteorology Department (IMD), Pune from the year 1974 to 2014. The meteorological data supplied by the IMD, Pune for the districts of Madhya Pradesh in phased manner. There were some data gaps for some of the districts and raingauge stations of Madhya Pradesh. The analysis for the districts were undertaken where the data supplied by the IMD were in consistent.

Acknowledgement

Author is thankful to the Director, IIFM and Dr GA Kinhal, IFS former Director, IIFM for providing support in completion of the study sponsored by the State Knowledge Management Centre for Climate Change (SKMCCC), Environmental Planning & Coordination Organisation, Bhopal.

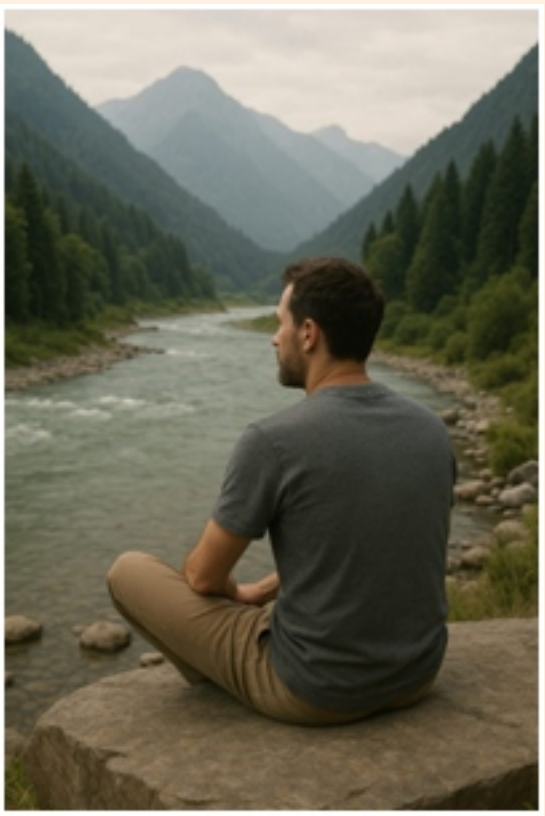

1. शांति

राणा प्रताप सिंह

किन सड़कों से गुज़रती है, शान्ति
किन लोगों से मिलती–जुलती
किससे चली जाती दूर देखते ही उसको दूर से
कब किस मुहल्ले में ठहरती है, शान्ति ?

शांति को कहाँ पा जाते, लोग
क्यों रूठ कर चली जाती बिन बताए ?

गाँवों, कस्बों, शहरों, जंगलों
और पठारों में
ऊँची–ऊँची पहाड़ी कंदराओं में
शांति को
खोजते फिर रहें हैं लोग

शांति को होना चाहिए
धरती की तरह ठोस और गोल

शांति का कोई आकार
क्यों नहीं है ?

2. किसान

राणा प्रताप सिंह

खेत में
दानों के साथ
अंकुरता

उगता
बढ़ता
फूलता
फलता
पकता
कटता

खलिहान में
फिर से बदलता हुआ
दानों की शक्ल में

एक निरीह
शरीफ
आदमी ।

म.नं. 29, सेक्टर–II, उद्यान–II
एल्डिको, रायबरेली रोड,
लखनऊ–226025
ईमेल : dr.ranapratap59@gmail.com

PROF. H. S. SRIVASTVA FOUNDATION FOR SCIENCE & SOCIETY

Office No. 04, 1st Floor, Eldeco Xpress Plaza,
Uttrathia Raebareli Road, Lucknow
Website : : www.phssfoundation.org Email:phssoffice@gmail.com

CSAE

Professor H. S. Srivastava Foundation for Science and Society is a national academic, non-profit voluntary organization registered under the society Act 1860, in Lucknow.

A) CENTRE FOR SUSTAINABLE AGRICULTURE AND ENVIRONMENT-

- A Research and Development Centre of the Foundation,**'Centre for Sustainable Agriculture and Environment'** is working for the basic and translational research in these fields, Science Communication, Development of women and youth leadership and poverty elimination in the rural and peri-urban societies.
- The financial support is earned through the royalty, donation and sponsorship

B) Publication of International Research Journals-

- The Foundation is publishing a monthly research journal Physiology and Molecular Biology of Plants (PMBP; Clarivate JCR Impact Factor 3.3) in collaboration with Springer Nature from 2002 which was started in 1995 by another society.

C) Conferences, Seminar and Workshops-

- The Foundation is organises annual national/International conferences and periodical workshop, seminar and training programmes for scientific interaction and science communication regularly.
- An Annual National Rural Science Congress has been started from 2022 to explore the issues and challenges of sustainable rural development in India.

D) PHSS Foundation Awards-

- Five biennials' national awards are conferred to the distinct achievers in the different fields by the Foundation from 2012.

E) Popular Science Magazine-

- A quarterly Multilingual People Science Magazine Kahaar (www.kahaar.in) is published from 2014 to communicate science in general and concepts and practices of sustainable agriculture and environment in particular for college and school students and rural youth.

We invite, you all the like-minded people across the age, gender, geography, religion, and profession to join with us, collaborate and light the lamp for a better tomorrow.